ध्रुवसर्वस्व ।

जिस में

हरिभक्त श्रीध्रुवदासजी की कविता के

अनेक ग्रन्थों का संग्रह है

और जिसे

बाबू रामकृष्णवर्म्मा

अध्यक्ष भारतजीवन ने

काशी नागरीप्रचारिणी सभा से हस्त-
लिखित कापी पाकर हरिभक्तों के
लिये छापकर प्रकाशित किया ।

काशी ।

भारतजीवन प्रेस में मुद्रित हुआ ।

सन् १८०४ ई० ।

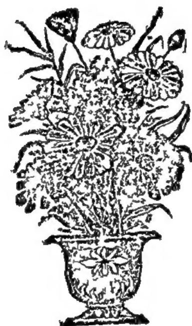
प्रथम बार १०००] [मूल्य ॥)

भूमिका।

यह काव्यग्रथ हरिभक्त श्री ध्रुवदास जी का रचा है जिसमें उन्होंने भक्ति और प्रेम का मानो समुद्र उमड़ा दिया है। काशीनागरीप्रचारिणी सभा की ओर से हिन्दी के प्राचीन ग्रथों की हस्तलिखित कापियों की सदा खोज रहती है, उसमे गवर्मेंट भी सहायता करती है। इसकी छपी हुई रिपोर्ट में इस ग्रथ का नाम देखकर हमने उक्त सभा के मन्त्री से इसके पाने की प्रार्थना की और उन्होंने कृपाकर इस ग्रथ के छापने का अधिकार देकर हमें अनुगृहीत किया। हम आशा करते हैं कि और भी ग्रथ हम उक्त सभा से प्राप्त कर क्रमश प्रकाशकर सकेंगे।

रामकृष्ण वर्म्मा।
भारतजीवन, काशी।







ध्रुवदास ।

ग्रन्थकर्ता ध्रुवदास जी गोस्वामी श्रीहित हरिवंश जी के शिष्य थे, श्री वृन्दावन में रहते थे । इनके बनाए निम्नलिखित ग्रन्थ बहुत छोटे छोटे उपलब्ध हुए हैं वृन्दावन सत, सिङ्गार सत, रसरत्नावली, नेहमञ्जरी, रहस्यमञ्जरी, सुखमञ्जरी, रतिमञ्जरी, वनविहार, रङ्गविहार, रसविहार, आनन्ददशाविनोद, रङ्गविनोद, नृत्यविलास, रङ्गहुलास, मानरसलीला, रहसिलता, प्रेमलता, प्रेमावली भजनकुण्डली, वावनब्रह्मपुराण की भाषा, भक्तनामावली, मनसिङ्गार, भजनसत, मनशिक्षा, प्रीति चौवनी, रसमुक्तावली, और सभामण्डली । इनमें से केवल तीन ग्रन्थों के बनने का समय दिया है, अर्थात् सभामण्डली संवत् १६८१ में बनी वृन्दावन सत संवत् १६८६ में और रहसिमञ्जरी संवत् १६९८ में । इससे यह अनुमान होता है कि इनका समय संवत् १६४० से संवत् १७४० के लगभग होगा । इनके विषय में और कुछ विशेष वृत्तान्त नहीं मिलता, केवल "रास सर्वस्व" के निम्नलिखित छप्पय से विदित होता है कि ये रासलीला के बड़े अनुरागी थे और करहला ग्राम के रासधारियों के प्रेमी थे

"प्रथम सुमिरि हित* नाम धाम† धामी‡ जु बखाने।
रसिक जनन के हेतु जुगल परिकर§ गुन गाने॥
बरनी लीला रास प्रतच्छ तासों मति पागी।
पुनि करि अनुकरन धाम ललिता अनुरागी॥ ?
सदा रास रसमत्त हिय प्रेम सुधा पूरन कह्यो।
बलि जाउँ देस कुल धाम को जहँ ध्रुवदास सु अवतर्‍यो'॥१



* हित = गोस्वामी हित हरिवंश जी। † धाम = श्री वृन्दावन। ‡ धामी = श्रीराधाकृष्ण। § जुगल परिकर = भगवद्भक्त।

वृन्दावन शतक।

दोहा।

प्रथम नाम हरिवंस हित रटि रसना दिन रैन।
प्रीति रीति तब पाइये अरु वृन्दावन ऐन ॥१॥
चरन सरन हरिवंस की जब लगि आयो नाहि।
नव निकुञ्ज की माधुरी क्यों परसै मन माहि ॥
वृन्दावन थिति करन को कीनो मन उतसाह।
नवलराधिका कृपा बिन कैसे होय निवाह ॥३॥
यह आसा धरि चित्त में कहत जथामति मोर।
वृन्दावन सुख रग को काहु न पायो ओर॥४॥
दुर्लभ दुर्घट सबनि तें वृन्दावन निज भौन ।
नवलराधिका कृपा बिन कहि धौं पावै कौन॥५॥
सबै अंग गुनहीन हौं ताको जतन न कोय ।
एक किसोरी कृपा तें जो कछु होय सु होय॥६॥
सोउ कृपा अति सुगम नहि ताको कौन उपाव।
चरन सरन हरिवंस की सहजहिं बन्यो बनाव॥
हरि सुचरन उर धरति धरि मन वच कै विश्वास।
कुँवरि कृपा ह्वै है तबहिं अरु वृन्दावन वास॥

प्रिया चरन बलु जानि कै बाढ्यो हिये हुलास।
बेई उर में आनिहैं बेई पुलिन प्रकास ॥ ८ ॥
कुंवरि किसोरी लाडिली करुनानिधि सुकुमार।
बरनौ वृन्दाविपिन को तिनकै चरन सँभारि ॥
हेममई अवनी सहज रतन खचित बहु रग ।
चित्रित चित्र विचित्र गति छवि की उठत तरग॥
वृन्दावन झलकनि झमक फूलि नैन निहार ।
रवि ससि दुति धरि जहा लगि ते सब डारे वारि॥
वृन्दावन दुति पत्र की उपमा को कछु नाहि।
कोटि ७ वैकुण्ठह्न तिहि सम कहें न जाहि ॥
लता लता सब कल्पतरु पारिजात सब फूल ।
सहज एक रस रहत है झलकत जमुना कूल ॥
कुञ्ज कुञ्ज अति प्रेम सो कोटि कोटि रति मैन।
दिन दिन कै प्रति करत हैं श्रीवृन्दावन ऐन॥१५॥
विपिनराज राजत दिनहि बरषत आनद पुंज ।
लुब्ध सुगन्ध पराग रस मधुप करत मधु गुंज ॥
अरुन नील सित कमल कुल रहे फूल बहुरग।
वृन्दावन पहिरे मनो बहु विधि बसन सुरग ॥

त्रिविध पौन नीको बहै जैसी रुचि जिहिँ काल।
मधुर मधुर सुर कोकिला कूजत मोर मराल॥
मण्डित जमुना वारि यो राजत परम रसाल।
अति सुदेस सोभित मनो नील मनिन की माल॥
विपिन धाम आनन्द को अस को सकै सराहि।
मदन केलि सम्पति सदा तिहि कर पूरन आहि॥
छिन छिन वन की छवि नई नवलजुगल के हेत।
समझि बात सब जीव की सखि वृन्दा सुख देत॥
देवी वृन्दाविपिन की वृन्दा सखी सरूप ।
जिहिविधिरुचिद्दै दुहुनकीतिहिविधिकरतअनूप॥
गावत वृन्दाविपिन को नवल लाड़िली लाल।
सुखद लता फल फूल द्रुम अदभुत परम रसाल॥
उपमा वृन्दाविपिन की कहि धौ दीजै काहि।
अति अभूत अदभुत सरस श्रीमुख बरनत ताहि॥
आदि अन्त जाको नहीं नित्य सुखद वन आहि।
माया त्रिगुन प्रपञ्च की पवन न परसत ताहि॥
वृन्दाविपिन सुहावनो रहत एक रस नित्त ।
प्रेम सुरङ्ग रचे तहा एक प्रान द्वै मित्त ॥ २६ ॥

चतुरानन देख्यो कछू वृन्दाविपिन प्रभाव ।
द्रुम द्रुम प्रति अरु पत्र प्रति औरै बन्यो बनाव॥
आप सहित सब चतुर्भुज सब ठां रह्यो निहारि।
प्रभुता अपनी सब गई तन मन तब रह्यो हारि॥
लोक चतुर्दस ठकुरई सम्पत्ति सकल समेत ।
सब तजि बसि वृन्दावनै रसिकन को रसखेत ॥
सकहितोबसुवृन्दाविपिनछिनछिनआयुबिहात।
ऐसो समै न पाइहौ भली बनी है बात ॥४८॥
छांडि स्वाद सुख देह को और जगत की लाज।
मनहि मारि तन हारि कै वृन्दावन में गाज ॥
वृन्दावन के बसत में करै जो अन्तर आन ।
तिहि सम सत्रु न और कोउ मन बच कै यह जान॥
वृन्दावन के बास को जिनकै नाहि हुलास ।
माता पित्र सुतादि तिय तजिये तिन कोपास ॥
और देस के बसतहौ अधिक भजन जो होय ।
इहि सम नहि पूजत तऊ वृन्दावन रहे सोय॥
वृन्दावन में जो कबहु भजन कछू नहि होय ।
रज तो उडि लागे तनहि पीवै जमुना तोय ॥

वृन्दाविपिन प्रभाव सुनि अपनोई गुन देत ।
जैसे बालक मलिन को मात गोद भरि लेत ॥
और ठौर जो जन करै होत भजन तउ नाहि।
ह्याँ रमि स्वारथ आपनै भजन गहै फिरि बाह ॥
और देस के बसतहीं घटत भजन की बात ।
वृन्दावन में स्वारथौ उलटि भजन ह्वै जात ॥
यद्यपि सब औगुन भर्यौ तदपि करत तव ईठ।
हित सें वृन्दाविपिन को काहे दीजै पीठ ॥५९॥
वृन्दावन तें चलतहीं जिनके दीस बिहात ।
ते दिन लेखे जिन लिखो व्यर्थ अकारथ जात॥
पशुपच्छीहितविपिनघर समझि बसै जो कोइ ।
प्रेम बीज तिहि ठौर तें तबहीं अंकुर होइ ॥
जैसे धावत विषय को कुजन गहत चित पानि।
ऐसे वृन्दाविपिन को सरन गहो ध्रुव आनि ॥
बसिबोवृन्दाविपिनको जिहितिहिविधिदृढहोइ।
नहि चूकै ऐसो समय जतन कीजिये सोय॥६१॥
कहँ तू कहँ वृन्दाविपिन आनि बन्यो सयोग ।
यहै बात जिय समुझि कै अपनो तजि सुखभोग।

छनभगुर तन जानि यह छाड़हु विषय कलोल।
कौडी बदले लेहि तू अदभुत रतन अमोल ॥
कोटि २ हीरा रतन अरु मनि विविध अनेक।
मिथ्या लालच छाड़ि के गहु वृन्दावन एक ॥
कहि मो मात पिता न हित नही पुत्र कोउ नाहि।
इनमें जो अन्तर करै बस वृन्दावन माहि ॥
नाते जेते जगत के ते सब मिथ्या मान ।
सत्य नित्य आनन्दमय वृन्दाविपिनहि जान ॥
वसि के वृन्दाविपिन मे ऐसी मन में राख ।
प्रान तजौ वन ना तजौ कहौं बात कोउ लाख॥
चलत फिरत सुनियत यहै राधावल्लभ लाल ।
ऐसे वृन्दाविपिन में बसत रहौ सब काल ॥
अमिवो वृन्दाविपिन को यह मन में धरि लेहू।
कीजे ऐसे नेम दृढ या रज में परे देह ॥ ६८ ॥
खड खड होइजाइ तन अग अग सत टूक ।
वृन्दवन नहि छाडिये छाडिब है बडि चूक ॥
पटतर वृन्दाविपिन को कहि क्यो दीजै काहि।
जिहि वन भुव की रेनु मे मरिवो मगल आहि॥
वृन्दावन के गुनन सुनि हित सो रज में लोटि।
जिहिसुखकोपूजतिनहीं मुक्तिआदि सुखकोटि॥

सुरपति पशुपति प्रजापति रहे भूलि तिहिठौर ।
वृन्दावन वैभव कहो कौन जानिहै और ॥७३॥
यद्यपि राजत अवनि पर मव तें ऊंचो आहि ।
ताकी सम कहिये कहा श्रीपति वन्दत ताहि ॥
वृन्दावन वृन्दाविपिन वृन्दाकानन ऐन ।
छिन २ रसना योष कर वृन्दावन सुखदैन ॥
वृन्दावन आनन्दघन तो तन नस्वर आहि ।
पसुज्योजीवतविषयसुख काहे न चिन्तत ताहि॥
वृन्दावन वृन्दा कहत दुरित वृन्द दुरि जाहि ।
नेह वेलि हरिभजन की अति उपजै उरमाहि॥
वृन्दावन सुनि श्रवण करि वृन्दावन को गान ।
मन वच के अति हेत सो वृन्दावन पहिचान ॥
वृन्दावन को नाम रटि वृन्दावन को देखि ।
वृन्दावन सों प्रीति करि वृन्दावन सुर लेखि ॥
वृदावनहि प्रनाम करि वृन्दावन सुख खानि ।
जो चाहत विश्राम मन वृन्दावन उर आनि ॥
तजि कै वृन्दाविपिन को और तीरथहि जात।
छाडि विमल चिन्तामनिहीं कौडी को ललचात॥
पाइ रतन चीन्हो नहीं दीनो कर,तें डारि ।
यह माया श्रीकृष्ण की मोह्यो सब संसार॥८२॥

प्रगट जगत में जगमगै वृन्दाविपिन अनूप ।
नैन अछत देखत नहीं यह माया को रूप ॥
वृन्दावन को जस अमल जिहि पुरान में नाहि।
ताकी बानी परै जिन कबहू श्रवनन माहि ॥
वृन्दावन के जस सुनत जिनकै नाहि हुलास ।
तिनको नाम न लीजिये तजि ध्रुव तिनको पास॥
भवन चतुर्दश आदि दै ह्वै है सबको नाम ।
इक छत वृन्दाविपिन में सुख को सहजनिवास॥
कोमल चित सबसो मिलै कबहु कठोर न होइ।
निरस्नेह निर्वैर रह ताको शत्रु न कोइ ॥ ८७॥
वृन्दावन इहिविधि बसै तजिकै सब अभिमान।
तृन तें नीचो आप को जानै सोई जान ॥८८॥
रूखे सीखे जो जुरे साक पत्र कछु आय ।
ताही सों सन्तोष कै रहै अधिक सुख पाय ॥
देह स्वाद छुटि जाहि सब कछु होइ छीन शरीर
प्रेम रंग मनमें धरै विहरै जमुना तीर ॥ ९० ॥
युगल रूप की झलक उर नैन रहे झलकाइ ।
ऐसे सुख के रंग में राखि मनहि रँगाइ ॥ ९१ ॥
आवै छवि की झलक उर नैनन झमकैं वारि।
चितवत श्यामल गौर तन सकहि न नेकु सँभारि॥

जीरन पट अति दीन लट हिये सरस अनुराग।
विवस सघन वनमें फिरै गावत युगल सोहाग॥
रस में देखत फिरै बन नैनन वन रह जाइ ।
कहुं २ आनँद रग भरि परै धरनि थहराइ ॥
ऐसी गति ह्वैहै कवहि मुख निसरै नहि वैन ।
देखि २ वृन्दाविपिन भरि २ ढारै नैन ॥ ९५ ॥
वृन्दावन तरुतर ढरै नैनन सुख के नीर ।
चिन्तित फिरै सुप्रेम वस स्यामल गौर सरीर ॥
प्रगट सच्चिदानन्द घन वृन्दाविपिन सुदेस ।
जामे कवहू होत नहि माया काल प्रवेस ॥९७॥
सारद जौ सतकोटि मिलि कलपन करै बिचार
वृन्दावन सुख रग को कबहु न पावै पार॥९८॥
वृन्दावन आनन्द निधि सव ते उत्तम आहि ।
मोतें नीच न और कोउ कैसे पैहौं ताहि॥९९॥
जिमि बौना आकास फल चाहत है मनमाहि।
ताको एक कृपा विना और जतन कछु नाहि॥
कुँवरि किसोरी नाम सुनि उपज्यो दृढ विश्वास।
करुनानिधिमृदुचित्तमति याते बढि जियआस॥

जिनको वृन्दाविपिन है कृपा तिनहि की होय।
वृन्दावन में तबहि नर रहन पायहै सोय ॥
वृन्दावन सत रतन की माला गुही वनाय ।
भाल भाग जाके लिखो सोई पहरै आय॥१०३॥
वृन्दावन सुख रंग की आसा जो चित आहि ।
निसिदिन कण्ठ धरे रहो नेकु न टारो ताहि ॥
वृन्दावन सत कहि कहैं सुनिहै नीकी भांति ।
निसिदिन तिन उर जगमगै वृन्दावन की कांति॥
वृन्दावन को चिन्तवनि यहै दीप उर धार , ।
कोटि जनम के तम अघनि काटि करत उजियार॥
वसि कै वृन्दाविपिन में इतनो वडो सयान ।
जुगल चरन के भजन विन निमिख न दीजै जान॥
महिमा वृन्दाविपिन की कहि न सकत मम जीह।
जाके रसना है सहस तिनहू काढ़ी लीह॥१०८॥
इति श्रीभक्तहरिवसकृत वृन्दावनशतक समाप्त।

अथ श्रृङ्गारशतक लिख्यते।

दोहा।

हरिवशचरन भुव चिन्तवत होत जु हिये हुलास।
जो रस दुर्लभ सबनि कौ सो पैयत अनयास॥
व्यासनन्द पदकमलबल सकल सुखनि कौ सार।
रचि कीन्हौ सिङ्गारसत अद्भुत प्रेम विहार॥२॥
बाँधो भुव गुन सङ्खला प्रथम चालिसऽरु तीन।
दुतिय चालीस ऽरु तीसरी द्वै पर चालिस कीन॥
प्रथम शृङ्खला माहिँ कछु कह्यो बाह्निरो रूप।
निरखिलाल सखिरहे छकि सो छवि अतिहि अनूप॥
छिन छिन नेह काटाछजल सींचत पियहिय ऐन।
भाग पाइ सो कबहुँ भुव या सुख पावै नैन ॥

सवैया।

कैसो फब्यो है नीलम्बर सुन्दर मोहि लियो मनमोहन माई। फैलि रही छवि अङ्गनि काँति लसैं बहु भाँति सुदेस सुहाई॥ सीस कौ फूल

सुहाग को छत्र सदा पिय के मन कों सुखदाई।
श्रौर कछू न रुचे ध्रुव पीय कों भावे यहै सुकु-
वारि लडाई ॥ ६ ॥

कवित्त।

राधिका कुँअरि प्यारी फुलवारी माँझ ठाढी फुलकारी सारी तन सोभित बनाव को। लोइन बिसाल बाँके अनियारे कजरारे प्रीतम के प्रान हरे हेरन सुभाव को ॥ चूरी मखतूलो नील-मनिनि को कर बनो बेसरि सुदेस उर अँगिया कटाव को। कुन्दन को दुलरी औ मोतिन के हार हिये हित ध्रुव चारु चोकी लसति जराव को ॥ ७ ॥

जरकसी सारी तन जगमग रही फबि छवि को झलक मानो परी है रसाल री। उज्जल सु-रग अनियारी कोर नैननि की सोसफूल बेंदो लाल सोहै सर भाल री॥ रतनजटित नीलमनि चौकी झलमले हित ध्रुव लसै उर मोतिन की माल री। पानिप अनूप पेखें भूली है निमेखें चारु मन्द मन्द वेसरि के मुक्तन की हालरी ॥८॥

फवि रही सारी मृदु केसरी सुरग रंग भींजी है फुलेल स्वच्छ सोधे मोद में सनी । खुलि रही तामें चाली चँगिया जँगाली गाढी दमकत कण्ठ लर मोतिन की है बनी ॥ मृगमद बेंदी लसै प्रीतम के मन बसै बेसरि झलक छवि बरषत है घनी । मुसकानि मन्द सुख रंग के तरग उठैं सोहने रसीले नैन सैन मैं विकी धनी ॥९॥

तन सुखमारी मिहीं भींजी है फलेल माझ तामें लाल अँगिया सुदेस वासनी कसी । सौंधे सगवगी बार बन्यो है सादो सिंगार मुख पर डारे वारि कोटि कन्न की ससी ॥ चञ्चल छवीले बड़े सोहनै रसीले नैन चितै नेकु अलवेली मन्द मन्दले हँसी । हित ध्रुव विवस भे चितवतही रहि गे घिरकनि बेसरि की प्रीतम के ही बसी ॥१०॥

काकरेजी सारी तन गोरे कैसो सोहियत पीत अतरौटा सौं दुरग छवि न्यारी है । मुख की सुपानि अति चञ्चल हैं नैन गति देखें ध्रुव भूली मति उपमा कौं हारी है ॥ बेंदी भाल नथ

सोहै बनै मोती मन मोहै बस भये पिय सुधि टेह को बिसारी है । गहै द्रुम डारि एक रहि गये ताहि टेक ऐसे वेष जब तें किशोरी जू निहारी है ॥ ११ ॥

पहिरे कुसुम-सारी सुरँग रँगीली प्यारी आली अलवेली भाँति रग माहिँ ठाढो है । केसरी सुरग भीनो सौंधे सगबगो कीनो सोहै उर अँगिया कसनि अति गाढा है ॥ फैलि रही अरुनाई तैसी भ्रुव तरुनाई मानो अनुराग रूप में भकोर काढी है । बदन झलक पर परो है अलक आइ देखे पिय नैननि ललक अति बाढी है ॥ १२ ॥

सवैया ।

सारी सुरग सुही अति झीनी सुगन्ध सों भीनी महा सुखदाई । रची चुनि प्रान समान सुजान ने फूलनि मोदहू तें मृदुलाई ॥ भूलि रही मति की गति हेरत जात नहीं उपमा भ्रुव गाई । रँगी पिय प्यार के रग मनो ऐं कि अङ्गनि रूप तरङ्गनि छाई ॥ १३ ॥

सारी हरी ने हर्यो मन लाल को मोहनी सोहनी के तन सोहै। अँगिया तहँ लाल सुरंग बनी लहँगा तिहि रंग खरो मन मोहै॥ रूप की रासि सबै गुन-आगरी या छवि की उपमा कहौ को है। राजै तहां ध्रुव कुञ्जविहारिनि सो छवि लाल पलोपल जोहै॥ १४॥

कवित्त।

हँसनि मे फूलनि को चाहनि मे अमृत को नखसिख रूपही की बरषा सो होति है। केसनि की चन्द्रिका सुहाग अनुराग घटा दामिनी की लसनि दसनही की द्योति है॥ हित ध्रुव पानिप तरंग रस छलकत ताको मनो सहज सिँगार सींव पोति है। अति अलबेली प्रिया भूषिताभरन बिन छिन छिन औरै और बदन की जोति है॥ १५॥

छवि सो छबीली खड़ी प्रीतम के रसभरी कोटि कोटि दामिनी न नखछवि पावहीं। चन्द कोटि मन्द होत मोतिन की कहा जोति नैकही को चितवनि ढरे लाल आवहीं॥ देखत है रुचि

लिये मुखसोभा चित दियें परम प्रवीन प्यारी रुचि लै लडावहीं । हित ध्रुव छिन छिन मैन के तरंग बढे प्रेम के हिंडोरे चढे मननि झुलावहीं ॥ १६ ॥

गोरी मृदु आँगुरिन मेहदी को रग फव्यो अतिही सुरग कजदलनि ललावहीं । मननि के बहु रग हरित लँगालो छले जिहि पोरी जैसे बने पिय पहिरावहीं ॥ चितै छवि कर गहे नैनि को छाड़ छाड़ चूमि चूमि माथे धरि आनि उर लावहीं । हित ध्रुव निसिदिन योंही रस रहे पगि जेही अग मन परे तेही सचु पावहीं ॥

कञ्चन के वरन चरन मृदु प्यारी जू के जावक सुरग रगे मनहि हरत हैं। हित ध्रुव रही फवि सुमिल जे हरि छवि नूपुर रतन खचे दीप से बरत हैं ॥ रीझि रीझि सुन्दर करनि पर पट धरैं आरसी सी लिये लाल देखिबो करत हैं। नख मनि प्रभा प्रतिबिम्ब झलमलै कण चन्दन के लुध मानो पाइन परत हैं ॥ १८ ॥

दोहा।

अद्भुत पद पल्लव प्रभा मृदु सुरंग छविऐन ।
छिन छिन चूमत प्यार सों रहत लाइ उर नैन॥

कवित्त।

फूलि फूलि रहे सब फूल फुलवारी में के रीझि रीझि छवि भाइ पाइनि में परी है। लाडिली नवेली अलबेली सुख सहजहीं निकसि निकुञ्ज तें अनूप भाँति खरी है॥ नखसिख भूषन लावन्यही के जगमगे दीठि सों छुवत सुकुमारताहू डरी है। हित भुव मुसकानि हेरत बिकाइ रहे दामिनी की दुति अरु हीरन की हरी है॥

कुंजन के आँगन में जहाँ जहाँ पग धरे छवि के बिछौना से बिछाये तहाँ जात हैं। रंग-भीनी लाडिली निपट अलबेली भाँति अलबेले लोइन न कैहूँ ठहरात हैं॥ नई नई माधुरी को सार है सुभाइनि में मुसकानि मानो सुख फूल बिगसात हैं। सोंधे की सी बास भुव फैलि रही चहूँओर रूपनिधि पानिप के पुंज बरषात हैं॥

अलवेली चितवनि मुसकनि अलवेली अलवेलो चलनि ललन मन हर्यो है। वृन्दावन मही मव भई छविमई आली पग पग पर मनो रूप झरि पर्यो है॥ कनक-वरन भये पत्र फूल पादप के आभा तन रही छाइ कुन्दन सो ढर्यो है। हित ध्रुव ऐसी भाँति झलकत तन-काँति चितवत पिय-चित नेकहूं न टर्यो है॥ २२॥

देखत छवीली जू की छवि छके छविनिधि ऐसी छवि देखें आली हग नहि डारियै। अलवेली चितवनि हँसनि ललन पर मानो सुखपुंज रंग के प्रवाह ढारियै॥ छिन छिन नई नई छवि की तरगछटा विवस करत प्रान कैसे कै सँभारियै। हित ध्रुव प्यारी जू के चरन चिह्न पर कोटि कोटि रति दुति मोहनी सी वारियै॥ २३॥

थिरकनि वेसरि के मोती की अनूप भाँति प्रीतम के नैन देखि अतिही लुभाने हैं। तिहि छवि की समान दैवे को न कछु आन याही तें विहारीलाल आपुन विकाने हैं॥ परे रूपसिंधु

साँझ जानत न भोर साँझ हित ध्रुव प्रेमहो के रंग सरसाने हैं। प्यारी जू के मिलिवे को त्रिपित न होत केहू कोटि कोटि जुग एक पल से बिहाने हैं ॥ २४ ॥

बडे बडे उज्जल सुरंग अनियारे नैन खंजन की रेख हेरें हियरी सिरात है। चपलाई खजन की अरुनाई कजन को उजराई मोतिन की पानिप लजात है ॥ सरस सलज्ज नये रहत हैं प्रेमभरे चञ्चल न अञ्चल मे कैसेहूं समात है। हित ध्रुव चितवनि छटा जिहि कोट परे तिहि ओर बरषा सो रूप की ह्वै जात है ॥ २५ ॥

कौलपच सारी बनी सोंधेही के मोदसनी चिते रहे स्याम धनी मानो चित्र ऐन हैं। आँगी नील रही फबि कहि न सकत छवि मोतिन की झलकनि अति सुखदैन हैं ॥ चितवनि मैन मई मुसकानि रसमई कोकिलाहू वारि डारी ऐसे मृदु बैन हैं। हित ध्रुव अग अंग सबै सुख सारमई मन के हरनहार बाँके दोऊ नैन हैं ॥२६॥

रूपजल में तरंग उठत कटाछनि के अग २ भौंरनि की अति गहराई है। नैनन कौं प्रतिविम्ब पर्‌यो है कपोलनि में तेई भये मीन तहा ऐसी उर आई है॥ अरुन कमल मुसकानि मानो फबि रही थिरकनि बेसरि के मोती की सुहाई है। भयो है मुदित सखी लाल को मराल मन जीवन जुगल भ्रुव एक ठाव पाई है॥२७॥

चलनि छबीली जी की चितवत छके पिय कहि न सकत कछु आजु औरै भाँति है। अल बेली रूपपुंज कुंज ते निकसि जब चन्द कोटि मन्द होत ऐसी तन काँति है॥ देखि हसी भौंरो मृगी तेऊ तहाँ मोहि रहीं भनक भनक सुनि भूलि सब जाति है। इत भ्रुव फूलनि की माल सी सहेली सबै ऐसे रहि गई मानो चित्रनि की पाँति है॥२८॥

दोहा।

अद्भुत छवि की माधुरी चितै विवस ह्वै जाहिं।
यहै सोच पिय प्रेम को रहत प्रिया उर माहिं॥

कवित्त।

छवि के छिपाइवे को रस के बढाइवे की अग अंग भूषन बनाये हैं बनाइ कैं। देखें नासा पुट-वेह प्रीतम भये विदेह याही हेत वेसरि व-नाइ धरी चाइ कैं॥ रोम रोम जगमगै रूप की अनूप छवि सकै न सँभारि हाँस चितई सुभाइ कैं। हित ध्रुव विवस लटकि जात छिन छिन यातें सखी सोभा सब राखी है दुराइ कैं॥३०॥

ऐसी है ललित प्यारेलालजू की प्रानप्रिया डीठि नहि ठहरात कैसे कै निहारिये। काजर की रेख जहा पानन की पीक भारो और सुकु-मारताई कैसे धौं विचारिये॥ * * * *। सहजही अग २ रूप सार मोटमई हित ध्रुव प्रान न्यो-छावर करि डारिये॥ ३१॥

अनियारे नैनसर वेध्यो मन प्रीतम को थिथ-कित चकित रहत बलहीने हैं। काजर को रेख तहां रही फवि निसरे न ताकि गिरत सखी अक भरि लीने हैं॥ रसिककिशोर पिय महासूर प्रेम

रन नैनन ते नैन तऊ न्यारे नाहिं कीने हैं। हित ध्रुव प्यारी सुकुमारी रीझि देखे गति अति सुकुमार महा प्रेम रंग भीने हैं ॥ ३२ ॥

प्यारी जू की मुसकानि बीजुरी सी कोंधी जानि प्यारे जू के उर तें न रेख सी टरति है। भरि भरि आवें नैन कैसेहू न पावें चैन बान की सी अनी हिये करकी करति है ॥ लाडिली न-वेली अलवेली खानि माधुरी की सहज सुभा-इनि मे सर्वसु हरति है। हित ध्रुव नये नये छवि के तरंग देखे रीझि सीसचन्द्रिका पगनि कौं ढरति है ॥ ३३ ॥

हारनि के भार भारी ऐसी सुकुमारी प्यारी रसिक रँगीले लाल कीनी उर हार सी। छवि के तमाल लपटानो रूप-वेलि मानो हँसनि दसन फूल फूले सुखसार सी ॥ नखसिख जगमगे रोम रोम प्रतिबिम्ब लसत हैं ऐसें जैसें आरसी मे आरसी। हित ध्रुव इहि विधि देखें सखी चित्र भई चहू कोद रहीं भूमि कंचन की डार सी ॥

अति अलवेली भाँति भूलैं अलवेली प्रिये सहज छवीली छवि नवल निहारहीं। सारी सुही सुरँग परत खिसि खिसि सखी वार वार प्यारे पिय फूल सो सँवारहीं ॥ जेही ओर अङ्ग पट भूषन भुकत पिय तिहिँ ओर मुरि मुरि प्रान जौं सँभारहीं। हित ध्रुव प्रीतम जी नाहिँ और दूजी गति छिन छिन तिनहीं के सुखहीं बिचारहीं ॥ ३५ ॥

सवैया।

रूप रसीली गुनीली छवीली रँगीली रँगीले के प्रान ते प्यारी। सुलज्ज सुरग सुनैन विसालनि सोभित अञ्जन रेख अन्यारी॥ महा मृदु बोलनि मोती की डोलनि मोल लिये ध्रुव कुञविहारी। रहे सुख पाइ न और सुहाइ भये बस नेह के देह विसारी ॥ ३६ ॥

कवित्त।

सोने ते सुरग गोरी सोंधे ते सुवास अति मृदुताई पर वारौं जेतिक सुमन री। रूपहुं कौं रूप जगमगत सकल वन आरसी कौं आरसी

लसत ऐसो तन री ॥ फेलि रही तन प्रभा जहाँ लों विराजे सभा हित ध्रुव चिते लाल भये हैं मगन री । प्राननि के प्रान अरु नैननि के नैन मेरे रीझि रीझि वार वार कहे छू‍ै चरन री ॥

कौन भाँति कौन कांति कौन रूप कौन नेह कौन एक है सुभाव कहा आली कहिये । कौन माधुरी तरग हाव भाव कौन रग कौन सुख पा निप विलोकतही रहिये ॥ काक कला रगमई जोबन की जोति नई रही है विचारि मति उ- पमा न लहिये । हित ध्रुव ऐसो प्यारी मृदुताई वारि डारो रीझि पिय छुवत चरन नैन लहिये॥

छवि ठाढी कर जोरे गुन कला चौंर ढोरें दुति सेवें तन गोरें रति वलि जाति है । उजराई कुज ऐन सुथराई रची मैन चतुराई चिते नैन अतिहि लजाति है ॥ राग सुनि रागिनोहू होत अनुराग वस मृदुताई अगनि छुवत सकुचाति है । हित ध्रुव सुकुमारी पुतरीनहू तें प्यारी जीवति देखे विहारी सुख सरसाति है ॥ ३६ ॥

रूप नवला सी प्यारी नाना रंग की सु भाइ भावनि की मृदुताई कही न परति है। नैनन के आगे लाल लिये रहैं निस दिन एकौ छिन मन तें न केहूं बिसरति है॥ भीजि भीजि जाति पिय सुख की तरंगनि में जब प्रिया बातन के रंग मे ढरति है। हित ध्रुव प्यारे जू की जोवनि किशोरी गोरी छिन छिन प्रीतम को मन को हरति है॥ ४०॥

रूप नवला सी देखें लच्छ चपला सी प्यारी परी खिसि नवल रँगीले जू के कर तें। हाव भाव रंगनि के जगमगि रही प्यारी चित्र से ह्वै रहे चितै चितै प्रेम भर तें॥ चतिहीं विचित्र सखी, रही है सँभारि ध्रुव जिनि झुकि परै धर पर याही डर ते। छिन छिन प्रेम सिंधु के तरंग नाना भाँति रह्यो थकि चकि मन तिहि रस पर तें॥ ४१॥

दोहा।

अंग अंग तन तें बढ़ै रूप तेज की काँन्ति। चहुँदिसि थाम्हे रहै सखि देखि लाल की भांति॥

कवित्त ।

रूप की सी फुलवारी फूलि रही सुकुमारी अंग अंग नाना रंग नवल निहारही । नैन कर कमल अधर है बँधूक मानो दसन झलक पर कुन्द वारि डारहीं ॥ बेंदी लाल है गुलाल नासिका सुवर्नफूल मोती बने जहाँ तहाँ जुही सी विचारहीं । छविहीं के खंजन रसीले नैन प्रीतम के खेलैं तहां भ्रुव चितै सखी प्रान वारही ॥

रूप वन प्यारी तन जोवन भरो है जहाँ सहज हरिततार्इ पानिप अनग री । दसन झलक भरैं छवि के सुरंग फूल मैन सुख फल मानो उरज उतंग री ॥ अंग अंग माधुरी स्रवत मकरन्द मानो भुज रस बेलि नख पल्लव सुरंग री । हित भ्रुव तिहि मधि राजै नाभि सरवर क्रीडै तहाँ पिय मन मद को मतंग री ॥ ४४ ॥

अलबेली सुकुमारी नैननि के आगे रहै तब लगि प्रीतम के प्रान रहैं तन मे । यह जिय जानि प्यारी रंचको न होत न्यारी तिनहीं के प्रेम रंग

रँगी रही मन मे ॥ परम प्रवीन गोरी हावभाव में किशोरी नये नये छवि की तरंग उठै छिन में। हित ध्रुव प्रीतम की नैन मीन रस लीन खेलिबौ करत दिन रैन रूप बन मै ॥ ४५ ॥

राधिका वल्लभलाल की प्यारी सखीनि की प्रान महा सुकुमारी। रूप को वेलि फली फल फूल मनोज उरोज भरे रस भारी। पत्र लावन्य हरे भरे रगनि जोवन मौजनि पानिप न्यारी। प्रीतम नैननि चैन तऊ नहि देखतहीं ध्रुव बाढै लखा री ॥ ४६ ॥

डीठिहूँ की भार जानि देखत न डीठि भरि ऐसी सुकुमारी कैन प्रानहूं तें प्यारी है। माधुरी सहज कछु कहत न बनि आवै नेकहूं की चितवत चकित बिहारी है ॥ कौन भाँति मुख की अनूप कान्ति सरसात करत विचार तऊ जात न विचारी है। हित ध्रुव मन परयो रूप के भँवर माझ नेह बस भये सुधि देह की बिसारी है ॥

भीनी नवली चँमेली फुलेल सों फूलनि के पट भूषन सोहै। लोइन वङ्क विसाल सचिक्कन

अंजन की छवि प्राननि मोहैं ॥ रूप तरगनि पानिप अगनि प्यारी सखी ललिताद्दिक जोहैं। भूलि रही ध्रुव तौ छवि औ अरु मोहनी मैन की नारि धौं कोहैं ॥ ४८ ॥

कुज तें निकसि दोऊ ठाढ़े जमुना के तीर आज सखी औरें भाँति प्रिया रग भरी हैं। निसि के चिहन चिते मुसकात रसनिधि बहु विधि सुख केलि रग रस ढरी हैं ॥ देखे ध्रुव छवि सीव मृदु भुज मेलि ग्रीव हँसौ भोरी भोरी मृगी ठौर तें न टरी है । हरी हरी लाल लाल पोत सेत सारी तन पहिरे सहेली सबै चित्र कीसी खरी है॥

नवल नवेली अलबेली सुकुमारी जू को रूप पिय प्राननि को सहज अहार री। विजन सुभाइनि के नेह घृत सो जु बने रोचक रुचिर है अनूप अति चार री ॥ नैननि को रसना सों त्रिपित न होत केहूं नई नई रुचि ध्रुव बाढत अपार री । पानिप को पानी प्याइ पान मुसकान खाइ रासि उर सेज खाइ पायी सुखसार री ॥

प्रानहूँ ते प्यारी सुकुमारी जू को देखतहीं बिहारी के रोम रोम लोइन ह्वै जात है। ज्यौं ज्यौं रूप पान करैं निमष न चैन धरैं त्यौं त्यौं प्यास बाढै अति क्योहू न अघात हैं ॥ छवि के तरगनि मे झूलत किशोर पिय हार तन हेरिहेरि खडे ललचात हैं। हित ध्रुव आरत मे भयो भ्रम चाहही मिले है कि नाही मन केहूं न पत्यात हैं ॥

रहे चकि लाल चिते मुख बाल पर्यो मन रूप तरगनि माहीं। भाइ सुभाइ उठे छिनहीं छिन लालची नैन न केहूं अघाहीं ॥ जीवन रग भरे अँग अङ्ग विलास अनङ्ग कहे नहीं जाहीं। वानक आहि अनूप छवीली को पानिप की उपमा ध्रुव नाही ॥ ५२ ॥

मुख छवि कांति सोहै उपमा कौं चन्द को है रहे माहि जोहि जोहि नवल रसिकवर। सीसफूल सोभा कछु कहत न बनि आवै मानहु सुहाग छत्र झलकत सीस पर ॥ बेंदी लाल रही फबि कहा कहौं नथ छवि और सब रहे दबि जहा लगि

दुतिधर। हित ध्रुव नैननि मे अंजन विराजै खरो चञ्चल चपल मनमोहन को चितहर ॥ ५३ ॥

दोहा।

कुंवरि छबीली अमित छवि छिन २ औरै और।
रहि गे चितवत चित्र से परम रसिक सिरमौर॥

इति प्रथम सखली सम्पूर्णम्।

अथ द्वितीय स०—दोहा।

दुतिय संखला सुनतही श्रवननि अतिसुख होइ।
प्रेमरतन गुन रूप सो मानो राखे पोइ ॥ ५५ ॥

कवित्त।

दुलहिनि दूलह कुवर दोऊ सहजहीं रसिक रँगीलेलाल भीजे रस रगना। छवि के बसन अभरन अलबेलता के ठाढे हैं छबीलो भांति लतन के अगना॥ सहज सुरग मृदु झलकें चरन कार रूप गुन पोइ बांध्यो प्रेमही को कगना। हित ध्रुव सहज दृगञ्चलनि गाँठि परी नयी चाव नई रुचि बढत अनगना ॥ ५६ ॥

जैसी अलबेली बाल तैसो अलबेलो लाल

दुहुनि मे उलही सहज शोभा नेह की। चाहनि की अंबु द दै सींचत हैं छिन छिन आलबाल भई सेज छाया कुंज गेह की ॥ अनुदिन हरी होत पानिप बदन-जोति ज्यों ज्यों बवछार भ्रुव लागै रूप मेह को। नैननि किवारि किये हेरैं सखी मन दियें चित्त सी ह्वै रहीं सब भूलीं सुधि देह की ॥ ५७ ॥

प्यारेजी को जीवनि है नवल किशोरी गोरी तिहा भाँति प्याराजी की जीवनी बिहारी है। जोई जोई भावे उन्हे सोई सोई रुचै इन्हे एक गति भई ऐसो रचको न न्यारी है। छिन छिन देखि देखि छवि के तरंग नाना प्रीतम दुहुनि सुधि देह की बिसारी है। हित भ्रुव रीझि रीझि रहे रूप रसभींजि ऐसो अब लगी प्रीति सुनी ना निहारी है ॥ ५८ ॥

प्रीतम की प्रेम-गति देखें भूली तन-गति बडे बडे नैन दोऊ आये प्रेमजल भरि। प्रिया लाल लाल कहि लिये लाइ उरजनि चूमि चूमि नैना

रही अधर दसनि धरि ॥ हित ध्रुव सखी सब देखत विवस भई प्रेम पट नाना रंग झलकै सबनि परि। एक चित्र की सी खरी एक खसि धर परी एकनि के नैननि तें गिरे नेह नीर ढरि ॥

नैननि के आगे प्यारी बिलपत हैं विहारी अँसुवनि प्रेमजलधारा चली जाइ री। कौन प्रेम जिहि फन्द परे हैं रँगीलेलाल अटपटी गति देखें हियौ अकुलाइ री ॥ हित ध्रुव चेति कैं किशोरी गोरी धीर धरि नैना नेह नीर भरि लीने उर लाइ री। प्रेम को समुद्र फिरि गयो है सबनि पर जहाँ तहाँ सखी धर परीं मुरझाइ री ॥६०॥

सवैया।

सेज सरोवर राजत है जल मादक रूप भरे तरुनाई । अंगनि आभा तरंग उठैं तहाँ मीन कटाछनि को चपलाई ॥ प्यासी सखी भरि अंजुल नैन पियें तें गिरी उपमा ध्रुव पाई । प्रेम गयन्दनि डारे हैं तोरि कैं कञ्चन कञ्ज चहूँ दिस माई ॥ ६१ ॥

कवित्त।

सखिनि की गति हेरें ठाढे भये जाइ नेरें क-
रुना कै चितयौ दुहुनि विन आर री। अमी की
सी धारा उर सींच गये सवनि कौं प्रेम सिन्धु भोर
ते निकासो वरजोर री॥ चहूं दिसि राजै खरो
महा रस रंगभरो नैननि की गति वहै तृषित
चकोर री। सहज तरंग उठै जल की सी छिन
छिन हित ध्रुव यहै खेल तहाँ निसि भोर री॥

नई सेज नई रुचि नयौ रूप नयौ नेह नेही
नये अलवेले अति सुकुमार री। नई लाज नयौ
रंग नई केलि कौ सिंगार पानिप अनङ्ग चटैं
सोहै उर हार री॥ छिन छिन तृषा वढै नेह
रँगी चितवनि मधुर विमल निज यहै प्रेम सार
री। हित ध्रुव प्यारौ मानो छुई है न मनहूं कौं
एक रस दिन जहाँ विसद विहार री॥६३॥

सेज रँगीलो रँगीली सखीन रची वहु रंग
सुरंग सुहाई। तापर वैठे रँगीले छवीले हँसे रस
मैं सुखमा सरसाई॥ चिक्कन अञ्जन नैन लसें

मेंहदी झलकें पट पान रचाई । रूप की दीपति तें ध्रुव कुज फनूस सी ह्वै रहीयो उर आई ॥६४॥

फूल सौं फूलनि ऐन रची सुख सैन सुदेस सुरग सुहाई । लाडिली लाल विलास की रासि भौ पानिप रूप बढो अधिकाई ॥ सखी चहूं ओर विलोकें झरोखनि जात नहीं उपमा ध्रुव गाई । खञ्जन कोटि जुरे छवि के हैं नैननि कि नवकुज बनाई ॥ ६५ ॥

दोहा ।

नवल रँगीली कुज में नवल रँगीले लाल ।
खेल रँगीलो नव रच्यौ चितवनि नैन विसाल ॥

कवित्त ।

फूलनि को कुज ऐन फूलनि की रची सैन फूलनि के भूपन वसन फूल मन मे। फूलही की चितवनि मुसकनि फूलही की फूल फूल लपटात फूल के सदन में ॥ फूलनि के हावभाव फूलनि को बढ्यौ चाव फूले फूल देखि ध्रुव उभै तन वन मे । वरपत सुख फूल ताको उपमा यों लसै फूलही की दामिनी लसति फूल घन मे ॥६७॥

छवि सों छवीले आछे बैठे हैं छवीली भाँति रतन निकुंज माहिँ बातें रति करहीं। परम प्रवीन प्यारी ताहू तें अधिक प्यारी रस भरि चितवनि चितै चित हरहीं॥ नवल नवल भाइ बेध्यो है मरम जाइ आनँद को रंग पाइ सुख रस ढरहीं। हित ध्रुव रीझि रीझि देवे को न कछू आहि फिरि फिरि प्यारीलाल पाइनि मैं परहीं॥

लाल पीत फूलनि की कुंज सुखपुंज मद्धि लाल पीत बागे तन दोऊ लाल पहिरे। भूषन की दुति प्रति अगनि मे झलकाति मानो रूप सिंधुनि तें उठति हैं लहरें॥ मन्द मन्द हँसि कहैं कछु रंग भीनो बात बेसरि के मोती दोऊ छवि सों थरहरें। हित ध्रुव रीझि रीझि रहे रसरति भीजि अचलनि सुधि भूलो परे सुख गहरें॥

प्रीतम किशोर गोरी रसिक रँगीली जोरी प्रेमही के रंग बोरी सोभा कही जात हैं। एक प्रान एक वेस एकही सुभाव चाव एक बात दुहुनि के मननि सुहात हैं॥ एक कुंज एक सेज

एक पट ओढे बैठें एक एक बीरो खगिड दोउ मिलि खात है । एक रस एक पान एक दृष्टि हित ध्रुव हेरि हेरि बढे चोप केहूं न अघात हैं ॥

सँवरे किशोरलाल लाडिली किशोरी गोरी बाँहँ जोरी एक सग नीके देखि पाए हैं। कञ्चन के कञ्जनि की कुञ्जनि मैं बैठे सखी बीती रति-केलि निसि तउ न अघाए हैं ॥ हारनि के व्याज पिय छुयौ चाहे उरजनि प्रिया जानि अञ्चल सो तबहीं दुराए हैं। हित ध्रुव परम प्रवीन कोक अगनि मैं समुझि समुझि मन दोउ मुसकाए हैं॥

बैठे सेज एक सग भीजे रस अग अग मन के मनोज रग मुदित करत है। अधिक अधीर ताई देखै प्रिया मुसकाई विवस किशोर पिय अक मे भरत हैं ॥ चितै चितै नैन कोर छुवै लाल कुच कोर भौंहनि की मुरनि तें अतिहीं डरत हैं । हित ध्रुव ललित कपोल नासा पुट चूमि अधरनि रस हित पाइनि परत हैं ॥७२॥

दुलहिनि दूलह किशोर एक जोर दोउ भूषन

सुहाने वागे वने अग अग री । चञ्चल नैना वि-साल अजन फबि है रसाल कर पद रचे सोहैं मेहदी के रंग री सहज सुहानी कुंज रची है सुहानी सेज लिये लाल वैठे हैं लडैती को उ-छग री । हित ध्रुव छिन छिन बढत सुहानो नेह रोम रोम उपजत छवि की तरग री ॥७३॥

नवल निकुंज सुखपुंज मे रँगीले लला दुल-हिनि दूलह रसिक सिरमौर री । रति रसरग साने ऐसे अग लपटाने परत न सुधि कछु को है स्याम गौर री ॥ महा रस माधुरी कौं पीवत है ज्यो ज्यो दोऊ बढत अधिक आली त्यौं त्यो प्यास और री । हित ध्रुव हेरि हेरि करत विचार सखी कौन प्रेम कौन रूप जुरी एक ठौर री ॥७४॥

रूपनिधि पानिप तरगनि के चितवत मैन-रग भरे नैन सोभित विसाल री । आनँद की कुञ्ज ऐन राजत है प्रेम सैन तापर रँगीले जग-मगे दोऊ लाल री ॥ माधुरी मदन मद मोद के विनोद करैं लालच की रासि ललचात सब काल

री। हावभाव चतुरई छिन छिन नई नई हित ध्रुव रस वस कीने वर वाल री ॥ ७५ ॥

सवैया।

आनँद पुंज सुहाग की कुंज मे सेज सुदेस सुरंग सुहानी। ले ले ध्रुव फूल अनूप दुकूल रची सुख मूल सुगन्ध सो सानी ॥ दूलह दोउ विचित्र महा कलही कल कोककला कल ठानी। परे रसरंग अनंग तरंग भई लव रैनि विहात न जानो ॥

दोहा।

अद्भुत कोककलानि की प्रेम रँगीली केलि ।
हार जीत तहँ होत नहिँ वढत रहै रुचि वेलि॥

कवित्त।

माधुरी की कुंज तामे मोद की लै सेज रची तिहि पर राजै अलबेले सुकुमार री। रूप तेज मोद के जुगल तन जगमगे हावभाव चातुरी के भूषन सुढार री ॥ भैर नौर नैननि की सैननि मे रहे भीजि कौन रंग वाढ्यौ जहाँ वोलिवौ उभार री । अतिही आसक्त सखी रहीं मोहि जोहि जोहि हित ध्रुव प्राननि की इहई अधार री॥

कमल की कुंज मे गुलाबदल सेज रची बागे कौलपत्र मृदु अतिही सुरग री। अग अग रहे भीजि सोंधेही के मोद माहिँ है है लर मोतिन की फोंदा बने सग री॥ कौलपत्र वारि डारे नैन अरुनाई पर चपलाई पर फीके खजन कुरंग री॥ फूले मुख देखि सखी रहि गई न्यारी न्यारी छकी अनुराग ध्रुव सबकै अभग री॥ ७९॥

फूलनि मे फूल दोऊ सग सखी नाहिँ कोऊ रग-भीजो बतियनि कहि मुसकात री। आनँद की सिधु परे नैन मैन रगभरे हित ध्रुव रस ढरे उर झपटात री॥ अधर अधर जोरें मिलि रही नैन कोरें थोरे थोरे बेसरि की मोती थहरात री। चली है उमडि सोभा बाढी रतिपति गोभा देखि लाल लाखचहिँ लालची ललात री॥८०॥

लाल कुज लाल सेज लाल बागे रहे बनि राजति हैं दोऊ लाल बातनि के रग से। लाल नीकी लाल भूमि लाल फूल रहे भूमि ललित लडैती लाल फूले अंग अग मे॥ लालेलाल सारी

तन पहिरें सहेली सबै भींजे दोऊ प्रानप्यारे प्रेमही के रंग मे । हित ध्रुव चितवत लोइन सिरात तब देखें जब प्यारी जू को पिय की उछंग मे॥

जहा जहा राधा प्यारी धरत चरन पिय तहा तहा नैननि के पाँवडे बनावहीं । महा प्रेम रंग रँगे तिनही के प्यार पगे सेवा सब अंगनि की करे सचु पावहीं ॥ मादक मधुर पिय प्यारी को सुभाव लिये छिन छिन भाँति भाँति लाडनि लडावही । तैसिये प्रबीन प्यारी हित ध्रुव सुकुमारी समुझि सनेह रस कण्ठ सो लगावही ॥

नेह रँगी मद मैन छकी पिय छाती लगी सुचितै सुख थोरी । गुनरासि किशोरी सुखाकर गोरी सुकीककलानि के सिंधु झकोरी ॥ रग तरग अनग अभग बढै छिनही छिन प्रीति न थोरी। सखी हित की नित की चित को ध्रुव सो सुख पीवत है निसि भोरी ॥ ८३ ॥

छिन छिन नई छवि पानिप मे रही फवि राधिका रसिकलाल पर प्रान वारिये । अगनि

झलक अरु भूषन झमक आली देखत रँगीली भाँति पलकैं न टारिये ॥ रंगभरी करें बात बीचि बीचि मुसकात चाहन चपल चितै मोही सखी सारिये । प्रेम की अनूप गति भूली तहाँ ध्रुव-मति तन मन धन बुधि सबै बात हारियै ॥८४॥

सुमिल सुठौन अंग झलकत मैन रंग पानिप झलक बहुभाँति झलकात हैं। हावभाव माधुरी की मूरति रँगीली जोर आनन लौं नैन ओर रंगही चुचात है ॥ फूले द्रुमतर ठाढे प्रेम के सु रंग बाढे हित ध्रुव मन्द मन्द दोऊ मुसकात हैं। छबि की झलक मानो उछरि उछरि परै ऐसे रूप आली कहौ कैसे कहि जात है ॥ ८५ ॥

केसरी सुरङ्ग दुकरंग बागे दुहुनि के जमुना की कूल कूल बाहाँजोरी आवही । सखिनि के जूथ जूथ आवत हैं पाछे पाछे हित की निकट सखी संग लागो गावहीं ॥ कहू कहू ठाढे होइ देखत सुफूल छबि मन भाए रँग लै लै प्रियहिँ बनावही । अति अलबेली भाँति फिरै अलबेलि

दोऊ करत विनोद ध्रुव जो जो मन भावहीं॥८६॥

जमुना के कूल कूल जहाँ जहाँ फूले फूल बाँहाँजोरी लटकत आवत हैं भोरहीं । सघन लतनि माँहि फूले फिरै रंग-भरे कहूं कहू ठाढे होइ फूलनि को तोरहीं ॥ घोरी सखी संग हतीं सोउ न्यारी ह्वैकें रही हित ध्रुव देखि छवि पलकैं न जोरहीं । प्रेमरस राते माते छिनहूं न होत हाँते ऐसे मन मिलि रहे चले एक ओरहीं ॥ ८७ ॥

दोहा।

एक प्रान मन एकही एक प्रेम को चाव ।
एकै सील सुभाउ मृदु सहजहि बन्यौ बनाव ॥

कवित्त।

प्यारी के जँगाली वागो लाल के गुलालो आली फबि रहे जैसे मोपै कहत न आवई । मृगमद बेंदी इतै बनी है सुरङ्ग उत हारि रह्यौ मन कछु उपमा न पावई ॥ कुँवरि की नथ सोहै बेसरि विहारी जू के कौन एक छवि बाढी देखिवोई भावई । झलकत मोती लरें कुन्दन की माल गरें मुसकनि मन्द ध्रुव सुख वरषावई ॥८८॥

अङ्ग भरि पट भरि भूषन भवन भरि चल्यौ है उमडि छवि अम्बु चहूं ओर री। सखिनि के नैन मीन परें है तरङ्गनि में जानत न कहाँ होत आली निसि भोर री॥ वृन्दावन कुञ्ज कुञ्ज रह्यौ पूरि सुखपुञ्ज हस अरु मृग मोर भए हैं चकोर री। हित ध्रुव एकरस रस के समुद्र दोऊ नागरि अनङ्ग केलि नवलकिशोर री॥ ८०॥

एक सङ्ग चलैं दोऊ एकै ओर ध्यान दीने एकै छोर कीने सबै निज तन मन कौं। एक वैस एक जोर एक से अभूषन पट एक सी छबीली छवि छाजत है तन कौं॥ रूपही के रंग भीने लोइन चकोर कीने एकै संग चाहै ऐसे जैसे मोन बन कौं। हित ध्रुव रसिक किशोर या जुगल बिनु आली को निबाहै रस ऐसे प्रेमपन कौं॥८१॥

रूप की अवधि दोऊ उपमा को नाहि कोऊ प्रेम सींव सुकुमार एकै रंग रँगे है। सहज अटक जहाँ बिना हित हित तहाँ उज्जल अनूप रस दोऊ मन पगे है॥ मदन कुसुम मोद रसि रह्यौ

टुहूं ओट अग अग रोम रोम भाइ जगमगे हैं। हित ध्रुव हेरि हेरि छबिरस भये बस तृपित न नेक क्यौंहू रैनि सब जगे है ॥९३॥

ज्यौं ज्यौं लाल देखैं मुख नैननि की तृपा होत प्यारीजी को रूप मानो प्यासही कौ रूप है। डीठि डीठि रही मिलि जैसे एक धारा ध्रुव दोहू भूली देखि छबि अतिही अनूप है ॥ कौन रस स्वाद गह्यौ कैसेहूँ न जात कह्यौ जानत न छाँह अरु कैसो होत धूप है। और सुख जैसे सब भये है पतङ्ग रसराज के सुखनि पर प्रेम भान भूप है ॥

रसिक रँगीलो लाल सुकुमारी प्यारी जू कौ मनहू की करन सों छूवत डरत हैं। प्रेम नवला सी प्यारी सहजहि सुकुवारी प्राननि की छाया तिन ऊपरै करत हैं ॥ नेकही की हाँसी सखी सार है विलासनि कौ जाकि हेरे और सब सुख विसरत हैं। अतिही असक्त ताको हित ध्रुव यहै गति रीझि रीझि दूरिही तें पाँयनि परत हैं॥९४॥

हेरि हेरि रूपहिँ चकित होइ रहै दोऊ प्रेम

कौ न वारापार कैसे कै बखानियै। मनमन चतु-
राई तन सुधि बिसराई कौन एक रस बाढ़्यौ
जानत न जानियै ॥ और कौ प्रवेस कहाँ मनहू
न भेदी जहाँ ऐसी प्रेम कटा ताहि काहि लै प्रमा-
नियै। हित भुव जोई कछू कहिबौ है ऐसी भाँति
जैसे आछौ पाहन सौ मानिक लै भानियै ॥९५॥

दोहा।

कहिबौ सुनिबौ रहि गयौ देखत मोहन रूप ।
अद्भुत कौतुक सौ रँगे प्रेम बिलास अनूप॥९६॥

इति द्वितीय।

अथ तृतीय।

कवित्त ।

अब सुनि तीनौं शृङ्खला रतिविलास आनन्द ।
तिहि रसमादक मत रङ्गे श्रीवृन्दावनचन्द ॥९७॥

सवैया ।

भाँति भली नवकुञ्जनि राजत राधिका वल्लभ
लाल बिहारी। प्रानिनि कौ मनि प्यारौ विहारिनि
प्यार सौं प्रीतम लै उर धारो ॥ मनौ छवि च

न्द्रिका चन्द्र के अङ्क मे वाढी महाछवि की उँजियारी। सखी चहुकोद चकोरी भई ध्रुव पीवत रूप अनूप सुवारी ॥ ९८ ॥

केलि करैं सुकुमारी विहारी वढी छवि भारी कही नहि जाई । लालची लाल रँगे रस बाल विलोकि रहे ध्रुव सुन्दरताई ॥ पीवत नैन कटाछिनि माधुरी कौतुक एक न कोहू अघाई । हितैहित हेरि लुभाइ रहे रुचि कौं रुचि देखि कै आप लजाई ॥ ९९ ॥

भाँति रँगीली छवीली के सग छवीलो बन्यो छवि की निधि माई । सेज सुहानी सुरग वनी तिहि ऊपर केलि करैं सुखदाई ॥ हिय सो हिय लाइ रहे लपटाइ लसैं अँग अग मे अगनि झाँई । मिली ध्रुव है सरिता छवि को मनो डोठि तहाँ न कहू ठहराई ॥ १०० ॥

लाडिली लाल विलास करे रचि सेज सुदेस सुरग सुहाई । मन्दहि मन्द हँसैं रसमत्त भरे अनुराग महाछवि पाई ॥ कोक कलानि की

घातनि माहि विचित्र विनोद बढावत माई । सखी चहुंकोद लतानि लगो निरखैं ध्रुव प्रानिन देत बधाई ॥ १०१ ॥

सवैया ।

गौरी किशोरी की अंगनि कांति लसै बहु भाँति न जात बखानी। रंग कौ रास रच्यौ रति राम विलास की औधि निकुञ्ज निरानी ॥ अ-सनि बाहु जुरो ध्रुवमण्डली नैननि निर्त्तत रैनि विहानी । अञ्चल चार करैं श्रम जानि के भूषन अंग तेई भए मानौ ॥ १०२ ॥

कवित्त ।

मदन के रस मे मगन विहार करै सुख की प्रवाह माहिँ लाल मन भीनो है । श्रमजलकन मुख छवि के समूह मानो नैन बैन सैन सर पञ्जर सो कीनो है ॥ कहा लों सम्हारै पिय परे सैन बिस भार लटकत सीस गहि लाइ उर लीनो है । हित ध्रुव परम प्रवीन सब अङ्गनि मैं अधर अधर जोरि सुधारस दीनो है ॥ १०३ ॥

सरस विलास सागे अग अग लपटाने आरस में अरसाने नैना न अघाने हैं। जब जब छूटि जात फिरि फिरि लपटात छाडि न सकत सेज ऐसे ललचाने हैं ॥ उठिवे को मन करैं पुनि तिहि रंग ढरैं घरी एक और जाउ कहि मुसकाने हैं। हित ध्रुव ऐसी भाँति छिन छिन सरसाति जानत न रैनि दिन केतिक विहाने हैं ॥

भोर कुंज द्वार खडे अग अग रग भरे अरुनाई नैननि की वरनो न जाति है। अजन अधर लीक फवी है कपोल पीक वसन पलटि परे सोभा भलकाति है ॥ रेसम सो अलवेली लटको है लाल भर मुदरी को आरसो निरखि मुसकाति है। हित ध्रुव ऐसी छवि देखतहीं रीझि रहे प्रीतम की अँखिया तौ कैहू न अघाति है ॥ १०५ ॥

सवैया ।

आजु की वानिक लाल रँगीले की मोपै कछू नहिँ जाति वखानी। लाडिली रगभरी सुकुमारि

रही लपटाइ हिये अरसानो ॥ रहे छुटि बार न हार सँभार विहार विनोद मे रैनि विहानी । रूप विलास सनेह निहारि सखी हित वारि पिवै भ्रुव पानी ॥ १०६ ॥

कवित्त।

भोर भये साँझही को धोखो है दुहुनि मन सुपनो सो चित्त करै कहा बात है भई । ऐ कि हम मिले नाहिँ बैठे हैं अवहिँ आइ ऐं कि निसा आजु कछू बीचही तें है गई ॥ भूषन बसन छूटे देखि पुनि समुझत कौन एक भ्रम दसा उपजी है सुखमई । हित भ्रुव यहे जाने मिल्यो अनमिल्यो माने नैननि मैं रुचिही की प्रेमवेलि है वई ॥

नवल रँगीले दोउ रस मे रसीले अति सहज सुरङ्ग नये नेह अनुरागे हैं । देखि देखि प्यारी अनदेखी सो लगत मन निमिषो न लागे नैन रैनि सब जागे हैं ॥ चाह भूली चाहि चाहि यद्पि लडैती माहि ऐसे प्रेमरङ्ग रस मोद मद पागे हैं । तिहि सुख की निकाई भ्रुव पै कही न जाई टपित न आई उर उरजनि लागे हैं ॥१०८॥

आदि न अन्त विलास करें दोउ लाल प्रिया में भई न चिन्हारी। नई नई भाँति नई छवि कांति नई नवला नव नेह विहारी ॥ रहे मुख चाहि दिये चित आहि परे रस प्रीति सु सर्वसु हारी। रहें इक पास करे मृदु हाँसि सुनो ध्रुव प्रेम अकत्थ कथा री ॥ १०९ ॥

दोहा।

नवल कुँवर दोउ रसिक मनि उपमा दीजे कौन।
चितै चितै मुख माधुरी ह्वै रहिये ध्रुव मौन ॥

सवैया।

पान सुरंग फबी है छबीली के भाँति छबीली सलोन बनाई। पयो मन लाल को प्रेम के पेंच मे देखत पेच रहे हैं लुभाई ॥ बेंदी जड़ाऊ की भाल दिये अरु नैननि अञ्जन रेख सुहाई। तै-सोई नत्थ को मोती बन्यो छवि छाइ रही न कही ध्रुव जाई ॥ १११ ॥

चूनरी लाल सुरंग छबीली की ओढे छबीली महा छवि पाई। कच गूंथि सुदेस रचो रचि

माँग रु नैनन अंजन रेख बनाई ॥ बेंदी दई हँसि लाडिली रंग सों बेसरि लै अपनी पहराई। रूप चढ्यौ मदमोद बढ्यौ भुव देखत नैन निमेष भुलाई ॥ ११२ ॥

पाग जँगाली फबी है किशोरी के केसरि रंग किशोर के माई । बेंदी मृगमद सोहै द्युतै उत लाल रसाल अनूप बनाई ॥ बेसरि नथ्य बनी झलकैं भुव खोजि रह्यो उपमा नहि पाई । रूप तरंग चितै मनमोद सखी चहुकोद रही है लुभाई॥

चूनरी लाल बनी है विहारी के पाग विहारिनि के सिर सोहै । छकी नव नेह महारस मेह छकी सखि आइ लोई छिन जोहै ॥ बेसरि पीय के नथ्य सुतीय के पानिप रूप अनूपम मोहै । भाँति रँगीली कही न परै सखि या छवि की उपमा कहो को है ॥ ११४ ॥

कवित्त ।

प्यारीजी की सारी अति प्यारी लागै प्रीतम की सोधे भीजी अँगिया सुरंग उर धारी है। नवल रँगीली जू के भूषन विहारीलाल, पहिरे

वाढी फूल जात न सँभारी है ॥ जोई कछु प्रिया जू के अगनि परस होत सोई प्रान जात होति ऐसी प्यारी प्यारी है । हित ध्रुव प्रेम वात कैसेहू कहो न जात जानें सोई जिहिं सिर मोहनो सी डारी है ॥ ११५ ॥

उज्जल स्याम सुरग सुहावनी लाज भरी अँखियाँ अति सोहैं । प्रेम भरी रस भाइ भरी ध्रुव प्यार भरी पिय को दिसि जोहै ॥ बढ्यौ अनुराग सुरग सुहाग सबै अँग प्रीतम प्राननि मोहै । नई छवि छोन प्रवीन विहारिनि खजन मीन कुरगनि को है ॥ ११६ ॥

खेलत वसन्त होरी नवल छबीली जोरी उड़त गुलाल अनुराग की सुरग री। मृदु मुसुकानि उर फूल येई फूल भये हावभाव सोधे भीजे सोहैं अग अग री ॥ नैनन की चितवनि छिरकनि प्रेम नीर सींचे हैं पिय हिय भरी रसरग री । हित ध्रुव भींजे मुख वारिध विलास हास सोई सुख देखैं सखि दिनहीं अभग री ॥ ११७ ॥

सवैया।

खेलत फाग भरे अनुराग सौं लाडिली लाल महा अनुरागी। तैसियै संग सखी सुठि सोहनी प्रेम सुरंग सुधारस पागी॥ चले पिचकारी चितौन छबीली की प्रीतम के उर अन्तर लागी। रंग की ओर न छोर सनेह की देखि सबै उपमा ध्रुव भागी॥ ११८॥

सखिन के मण्डल मध्य जु खेलत रंग विहारिनि संग विहारी। लै लै नव कुंकुम रंगनि छोडत वन्दन डारत नैन सँभारी॥ परै तहँ बूंद जहाँ जहँ चाहिये ऐसे प्रवीन सिंगार सिंगारी। बढ्यो ध्रुव रंग अनंग तरंग सनेह की रासि रहे हैं निहारी॥ ११९॥

लाडिली लाल निकुंज मे खेलत आनँद प्रेम विलास की होरी। अँखियौ पिचकारी भरी ध्रुव प्यार सौं छोडत प्यार सौं प्रीतम गोरी॥ मैन को खेल बढ्यो सुख पुंज बजे धुनि भूषन की थोरि थोरी। भयौ छवि को छिरकाव मनो जब साँवरे ओर हँसे मुख मोरी॥ १२०॥

हँसि जात विमल नीर सुन्दर सुदेस तीर नि-र्तत मयूरी मोर आनँद अधीर री। कमल नि कुंज कुंज मधुपनि होत गुंज बरषत सुख पुंज रटैं पीक कीर री ॥ खेलैं तहाँ रस रासि विविधि विनोद हाँसि सुरँगित भये ध्रुव अगनि के चीर री। डारत बदन प्यारी छिरकैं बिहारीलाल र-गन की बूँदैं बनी सुभग सरीर री ॥१२१॥

सोरठा।

खेलत कामिनि कन्त, भीने रँग अनुराग मे।
अद्भुत रास बसन्त, तहँ छबिहू भूली फिरैं ॥१२२॥

खेलत रास दोऊ रस रासि विचित्र सुगन्ध कलानि मे माई। नई नई भाति नई गति लेत हैं नितंहुं रीझि तहा बलि जाई ॥ कञ्चन मण्डल मे प्रतिविम्बित अगनि रूप तरगनि झाई। मनो ध्रुवचन्द उभै छवि धुनि ऊपर नितंत यो उर आई ॥ १२३ ॥

खेलै मनो अनुराग के वाग मे वाहुलता छवि असनि दीने। चहुँदिसि गावै सखीन के वृन्द

विचित्र बनाइ सिँगारहि कोने ॥ सारो सुही सब एकहि रंग फबी पहिरैं कर कजनि लोने। मद्धि किशोर किशोरी बने दोउ रूप सने ध्रुव रंग मे भीने ॥ १२४ ॥

कवित्त।

माधुरी तरग रग उपजत छिन छिन रोम रोम प्रति सोभा रही है लुभाइ कें। फूलनि कौं छांडि छांडि आवत मधुप धाइ तन की सुवास अति रही बन छाइ कै ॥ रूप को अनूप काँति कैसेहूँ न कही जाति नख आभा पर चन्द गयो है लजाइ कें। हित ध्रुव पिय मन यहै सोच रहै दिन ऐसी सुकुमारी को देखो न अघाइ कें ॥

प्यारीजू की भौंहन की सहज मरोर माझ गयो है मरोरो मनमोहन को माई री। ऐसे प्रेम रस लीन तिलहूं मे भये छीन जैसे जल विन कज रहै मुरझाई री ॥ धीरज न नेक धरै नैना नेह नीर ढरैं विवस पगनि और ढयो सीस जाई री। व्याकुल विहारीलाल चितै अङ्क भरे वाल पाये प्रान तब ध्रुव जब मुसकाई री ॥१२६॥

नागरी नवल गुन सींव सब अगनि में तेई भाइ जानिवे को नागर प्रवीन हैं। रूप अरु जोवन की जैसी है गरुताई तैसे इत रसिक सिरोमनि अधीन हैं ॥ नेकु मुरि बैठे जब व्याकुल ह्वै जात तब सहजहीं गति ऐसी जैसें जल मीन हैं। रंच हँसि चाहतही रोम रोम होत फूल हित ध्रुव नेह जहा सदाही नवीन हैं ॥ १२७ ॥

प्रेम के तरगनि मे प्यारी जू को मन पर्यो कछुक रुखाई छवि औरै भाँति भई है । मान पिय मान लियौ हियौ गहबर दियौ दीरघ उसास लेत भूलि सुधि गई है ॥ प्रानप्यारे लाल जू की गति हेरि हेरि तनु उर सो रह्यो है लागि आखें भरि लई है । हित ध्रुव दुहुनि को प्रेम कैसें कह्यो जात जानत हैं वेई छिन छिन प्रीति नई है ॥ १२८ ॥

जौलौ प्यारी बतराति चितै चितै मुसकाति पिय हिय लपटाति त्योंही लगि शाँति है। प्रेम नेम मे प्रवीन याही रस भये लीन जैसें जल माहिँ

मीन पस्यो ऐसी भाति है ॥ रुचिही की वेलि नई नैननि में आनि बई बाढत है रसमई फैली अति जाति है । आनँद के फूल ताहि लागी अनु राग पागी छिन छिन डहडहै औरे ध्रुव काति है॥

जहँा जहँा पग धरै माधौ को मन हरै रूप गुन पीछे फिरैं ऐसे सुकुमार री । हावभाव सिधु के तरग उठैं अग अग नैकही को चितवनि मोहै कोटि मार री ॥ छिन छिन नई नई पानिप अ नूप काति देखें तन झलकनि रहै न सँभार री। हित ध्रुव चितचोर नवल रँगीली जोर निसिदिन सखियन कीने उर हार री ॥ १३० ॥

सवैया।

लाडिली रग भरी सुकुमारि सिगार सलौन अनूप बन्यो है । रैनि बच्यो ध्रुव रग को खेल महा सुख में रससिधु तस्यो है ॥ रहे छुटि वार टुटी लर लार सुअग को अगनि रग ढस्यो है । मैन रची फुलवारी मे मानहु प्रेम की वारन आनि पस्यो है ॥ १३१ ॥

सोरठा।

फूल सो जब मुसकाति चितै लाडिली लाल त
को बरनें बहु भाँति प्रीतमहू रहे भूलि जहँ

सवैया।

मैन की बेलि बढी पिय हयी मे फूल मन
रध बाढे अपारा । एकहि रग सुरग रहे दि
सीच्यौ करै रस प्रेम की धारा॥ रीझि के चा
रही सुकुमारी बिहारी किये अपने उर हारा
देखतही ध्रुव या छवि को सिर नाइ लजाइ ग
सत मारा ॥ १३३ ॥

कवित्त।

नवल नवेली हेली अलबेली भाँति दोऊ रस
केलि सहलही रग भरे करहीं। बदन बदन जो
मिलि रही नेन कोरें थोरे थोरे बेसरि के मोत
थरहरही ॥ आरस मे अरसानो छवि न परै ब
खानी प्यार सो लटकि प्यारे पिय पर ढरही
हित ध्रुव सखिन की जीवनि है यहै सुख रा
लिये दुहुनि को मन अनुसरहीं ॥ १३४ ॥

सवया ।

कही न परै मुख की छवि पानिप राजति आजु रँगीली विहारिनि । भूलि रहै बिसरी सुधि देह की मैन मनोरथ बाढे अपारिनि ॥ मोह के सिन्धु परे मनमोहन हेरत नेह नवेली निहारिनि । लिये ध्रुव हेत सो लाड़ हिये पिय देखि सखी सुकुमारि सँहारिनि ॥ १३५ ॥

कवित्त ।

प्रेम के खिलौना दोउ खेलत है प्रेम खेल प्रेम फूल फूलनि सो प्रेम सेज रची है । प्रेमही की चितवनि मुसकनि प्रेमही की प्रेम रँगी बाते करैं प्रेमकेलि मची है ॥ प्रेम के तरंगनि मे प्रीतम परे है दोउ प्रेम प्यार भार प्यारो पिय हिय लची है । हित ध्रुव प्रेमभरी प्यारी सखी देखे खरो हित चितवनि छवि आनि उर सची है ॥

प्यारी जू की उनिहारि पिय के अहार यहै हियेहू को हार छिन चित ते न टारही । अग की सुबास पर भ्रमत भँवर मानो लोइन छबीलो

जू की छविहि निहारहीं ॥ पलु पलु पानिप त रग रंग औरै और माधुरी सुभाइनि की अमित अपारहीं । हित ध्रुव प्रेमरस विवस रहत दिन चितै चितै मुख ओर प्राननि को वारहीं॥१३७॥

आजु की छबीली छवि छटा चित वेधि रही कही नहिँ जाति कछू कौन गति भई है। नवल जुगल हँसि चितवति ठाढी पासि मानौ तिहि उर नई नेह वेलि वई है ॥ हित ध्रुव नीरज से नीर भरे ढरे नैन बोलत न कछू वैन चित्र सी ह्वै गई है । नैन छाइ लीने रूप परी तव प्रेम-कूप वाकी गति जाने सोई जिहि अनभई है ॥

आलिन के मनो प्रान की मूरति लाडिली लाल बनाइ सवारे । जीवति है सब देखि दुहून को राखति ज्यो अँखियानि मे तारे ॥ खान औ पान विलास विनोद अहार यहे तिनिके सुख सारे । रूप विलास सनेह की सींव निहारि रही ध्रुव नैनन टारे ॥ १३८॥

रूप की रासि किशोर किशोरी रँगे रसकेलि

निकुंज विहारा । माति अनग प्रवीन सबै अँग फूल सिरीसहू ते सुकुमारा ॥ बसौ उर नैननि मे दिन रैनि नमौ मन के जिते आहिँ विकारा । जाँचत बात न और कछू ध्रुव देहु प्रिये रसप्रेम की धारा ॥ १४० ॥

सहज सुभाव पर्यौ नवल किशोरी जू की मृदुता दयालुता कृपालुता की रासि है । नेकहू न रिस कहू भुलेहू न होत सखी रहत प्रसन्न सदा हिये मुख हासि है ॥ ऐसी सुकुमारी प्यारे लाल जू की प्रानप्यारी धन्य धन्य वन तेई जिनकै उपास है । हित ध्रुव और सब जहँ लगि देखियत सुनियत तहँ लगि सबै दुख पास है ॥

ऐसी करौ नवलाल रँगीले जू चित्त न और कहू ललचाई । जे सुख दुःख रहे लगि देहँ सो तै मिटि जाहिँ ऽरु लोक बड़ाई ॥ सगति साधु वृंदावन कानन तो गुन गाननि माझ बिहाई । छवि जाल पगो कौ तिहारे वसौ उर देहु यहै ध्रुव कौं ध्रुवताई ॥ १४२ ॥

दोहा ।

सीसफूल सिपिचन्द्रिका सदा वसौ मन मोर ।
अरु जव चितवत लाडिली पिय तन नैननि कोर॥
इक सत वीस ऽरु पच मिलि भइ सवैया आहि ।
मन दै यह सिंगारसत छिनछिन प्रति अवगाहि॥
नवकिशोरता माधुरी एक वैस रस एक ।
या रस विनु कहियै न कछु धरियै ध्रुव यह टेक॥
रसपति रससिगार को यह रस है सिगार ।
धन्य धन्य धन तेइ नर जिनके यहै विचार ॥
सव तें कठिन उपासना प्रेमपन्थ रस रीति ।
राई सम जो चलै मन छूटि जाइ ध्रुव प्रीति ॥
प्रेमभजन विन स्वाद नहि भजन कहा विन स्वाद।
देत प्रान मृग विवस ह्वै सुनत कपट को नाद॥
या रस सो जो रहैं रँगि तिनको पदरज लेहिँ ।
जिन समझी यह वात ध्रुव सफल करी तिन देह॥
भये कवित सिँगार के इक सत अरु पचीस ।
दोहनि मिलि सव ठीक भो इक सत दस चालीस॥

इति श्री शृङ्गारसतक सम्पूर्णम् ।

अथ रसरत्नावली लिख्यते ।

दोहा ।

प्रथम समागम सरसरस बन-विहार के रङ्ग ।
बिलसत नागरि नवल लल कोककलानि सु अङ्ग॥
नमित ग्रीव छवि सीव रहि घूंघटपटहिं सँभारि ।
चरननि सेवत चतुरई अति सलज्ज सुकुमारि ॥
जो अँग चाहत छुयो पिय कुँवरि छुवन नहिं देत ।
चितवनि मुसकनि छविभरी हरिहरि प्राननि लेत॥
चितवत औरे अंग पिय छुयो चहत अँग और ।
लज बनत नहिं चतुरई कुँवरि चतुरि सिरमौर॥
अलक सँवारन व्याज कैं परस्यौ चहत कपोल ।
मृदुल करनि डारत झटकि रसमय कलहकलोल॥
बातनि लाई लाडिली बहुविधि करि छलछन्द ।
बुधि बल कै खोल्यो चहत नागर नीवीबन्द ॥
नागरताई जहाँ लगि कीनी नागरि जानि ।
रहे दीन ह्वै चितै मुख हारि आपनो मानि ॥
आतुर पिय रस मो विवस उर अधीर अकुलात ।
कबहुँ गहत है पगनि कौ कबहूँ हाहा खात ॥

यह गति देखति लाडिली भई कृपाल तिहि काल।
हारेहीं रस पाइये उलटि प्रेम की चाल ॥ ८ ॥
नैन कपोलनि चूमि के लिये अङ्क भरि लाल ।
अधरनि रस दै दै मनों सींचत नैन तमाल ॥
सुरत सिन्धु सुख रस बढ्यो अतिअगाध नहिं पार।
लाज नेम पट दूरि कैं मज्जत दोउ सुकुमार ॥
रस विनोद विपरीतरति बरषत प्यार सु मेह।
चल्यौ उमडि भरि नेम को तोरि मेड़ जल नेह॥
अग अंग उरझानि की सोभा बढी सुभाइ ।
मृदुल कनक की वेलि मनु रहि तमाल लपटाइ॥
बिचबिच बोलत बैन मृदु सुनि सुख होत अपार।
रोचक रस पोषक तहा कलकिङ्किनि झनकार॥
प्रवल चोपसलिता बढी कहत वनत कछु नाहि।
पिय हिलाइ कुच घटनि सों पेरावत तिमि माहि॥
अति उदार मृदु चित्त सखि प्रेम सिन्धु सुखवारि।
विविधि रतन सब अङ्ग जो देत सम्भारि सम्भारि॥
सुरत स्वाति वरषा मनो निसिदिन वरषत आहि।
रह्यौ हारि चातक तहाँ तृषा लाल को चाहि॥

सुर तरङ्ग सुख मे कबहु रसिक विवस ह्वै जाइ।
कर जनि नासा पुट चटकि लालन लेत जगाइ॥
ऐसौ सुख कौ रस बढ्यौ श्रम नहि जान्यौ जात।
चाहचोप रुचि तहॉ की लालच चितै लजात॥
मैन मनोरथ बेलि बढि सोभा बढी अपार ।
मन न घटत तन हटत नहि अटकै सरस बिहार॥
सुरत केलि ऐसो बनी मानो खेलत फाग ।
हावभाव सोंधौ भयौ मुख ते बोल अनुराग ॥
अति सुरङ्ग सारी सुही छवि सो रहि झलकाइ।
कुन्दन बेलि तमाल पर मनु गुलाल रह्यौ छाइ॥
चञ्चल नैननि की चलनि पिचकाइनि की धार।
विवस भये खेलत दोऊ भीजे रँग सुकुवार ॥
श्रम जलकन मुख गोर पर अलकावलि गइ छूटि।
दरकी मव ठा कञ्चुकी हारावलि रहि टूटि॥२४॥
अलक लडी मुख लाडिली प्रीतम प्यार को देह।
श्रमित कानि चञ्चल पवन कर तरग निज नेह॥
सिथिल भये भूषन बसन चिचित पीक सुरङ्ग ।
लिख्यौ पत्र अनुराग मनुहारे कोटि अनङ्ग॥२६॥

अरुन नयन घूमत बने सोभा बढी सुभाइ ।
अधरनि रँग मादक पियौ सोई रँग झलकाई॥
पीक कपोलनि फबि रही कहुँ कहु अञ्जन लीक।
मनु अनुराग सिंगार मिलि चित्र बनाये नीक ॥
निरखत तेई चिह्न पुनि बढ्यौ चतुरगुन काम।
गही शरन चरननि तबै जानि सुखद निज धाम॥
लई लाल जिनि की सरन कोमल सुरङ्ग सुदेस।
कछुक कहत हौ यथामति तिनिकी छवि कौ लेस॥
कुँवरि चरन सुख-पुञ्ज मे अम्बुज छबि हरि लैन।
चहुँदिसि तिनि पर भ्रमत है प्रीतम के अलि नैन॥
लाल सखी कौ बेप धरि अद्भुत भाँति सिंगार।
प्रेम प्यार के चाव सो सेवत पद सुकुवारि॥३२॥
कर पर अञ्चल राखि के तिनि पर चरन अनूप।
चितवत लोने मुकर ज्यौं अमित माधुरी रूप ॥
चुम्बत छुवावत नैन हिय जावक चित्र बनाइ ।
देखि अटपटी प्रेम की गति नहि समुझी जाइ ॥
चरन चारु को हार हिय पिय प्रवीन रस प्रेम ।
ते पद सेवत रहत दिन सहज पर्यौ यह नेम ॥

चरन कञ्ज कुंदन वरन झलमलाति नख क्राँति।
आइ मिली रस करन को मनो विधुनि की पाँति ॥
मनिगन जुत झलकत रहें पद अम्बुज सुखदैन ।
सेवत तारागण मनो चन्द विहाने रैन ॥ ३७ ॥
सुमन सुवासन सेज पर लटको कुँवरि सुभाइ ।
पिय नैननि के कारनि सो तहँा पलोटत पाइ ॥
सब अँग नागर वैस सम नेह रूप गुन ऐन ।
पिय अधीर आधीन तहँ बँधे नैन फल सैन ॥
लोइन भीने मदन रस निरखत पानिप अग ।
कहि न सकत कछु बात पित वेपथु भये अँग अग ॥
लिये लाइ हित सो हिये गहि अधरनि मृदु दन्त।
मैन रस सब रच्यौ भरि रोम रोम प्रति कान्त ॥
प्रेम देस वृन्दा विपिन नृप दोउ नवलकिशोर ।
प्रेम खेल खेलत तहँा नहि जानत निसि भोर॥
अति स्वादो दोऊ लाडिले केलि पुञ्ज सुखरासि।
रीझिरीझि बिचबिच करत मधुरमन्द मृदु हाँसि॥
ज्यौ ज्यो मैन तरङ्ग उठे त्यो त्यौं सुख छवि काँति।
कहा कहौ रुचि चाह की छिन छिन नव नव भाँति॥

श्रमजल पीक सुरग कन झलकत श्रमल कपोल।
सुरत सिन्धु के मथत मनु प्रगटे रतन अमोल ॥
यह सुख देखत सखिन कें बाढ्यो अति अनुराग।
हित सौं देत असीस सब अविचल कुंवरि सुहाग॥
रूप मदन गुन नेहजुत आसौ भयौ अनूप ।
सो रस पीवत छिनहि छिन मिलि वृन्दावन भूप॥
तिहिसुखको रस मोद सखि जो उपजत दुहु माहिँ।
पलपल पावत हगनि भरिललितादिक न अघाहिँ॥
रसनिधि रस रतनावली रसिक रसिकनी केलि।
हित सौं जो उर धरे ध्रुव वढे प्रेम रस वेलि ॥
महागोप्य अद्भुत सरस चिन्तत रह मनमाहि ।
ता रस की रसिकनि बिना सुनि ध्रुव कहिनी नाहि॥

इति श्रीरसरत्नावली सम्पूर्णम् ।

अथ नेहमञ्जरी लिख्यते ।

चौपई ।

श्री वृन्दावन सोभी सोवा । विहरत दोऊ मेलि भुज ग्रीवा ॥ १ ॥ राजत तरुन किशोर तमाला । लपटी कञ्चन वेलि रसाला ॥२॥ अरुन पीत सित फूलनि छाए । मनो वसत निज धाम बनाए ॥ ३ ॥ वरन वरन के फूलनि फूली । जहँ तहँ लता प्रेमरस झूली ॥ ४ ॥ तीनि भाँति के कमल सुहाये । जल थल विगस रहे मन भाये ॥ वहुत भाँति के पच्छी बोलै । मोर मराल भरे रस डोलै ॥ ६ ॥ त्रिविधि पवन सन्तत जहँ वहई । जैसो रुचि तैसीये वहई ॥ ७ ॥ हिम वरन अद्भुत धरमाई । हीरनि खची अधिक झलकाई ॥ ८ ॥ रजकपूर की तहाँ सुहाई । सौरभ मै सन्तत सुखदाई ॥९॥ तरनिसुता चहुंदिसि फिरि आई । मनो नीलमनि माल बनाई ॥ श्रीवृन्दावन की छवि ऐसी । का पै कही जाति है तैसी ॥ ११ ॥

दोहा।

फूलि जहँ तहँ देखिये श्रीवृन्दावन माँहि ।
द्रुमवेली खग सहचरी विना फूल काउ नाहिँ॥

चौपई ।

सुन्दर सहज छवीली जोरी। सहज प्रेम के रँग में बोरी ॥ १२ ॥ खेलत फिरत निकुञ्जनि खोरी। एक बैस पिय कुँवरि किशोरी ॥१३॥ तैसिय सग सहचरी भोरी। बँधी वङ्क चितवनि की डोरी ॥ १४ ॥ विन प्राननि डोलत सँग लागी। प्रेम रूप के रँग अनुरागी ॥ १५ ॥ महा प्रेम की रासि रगीले। चित्त हरन दोउ छैल छवीले॥१६॥ जहँ जहँ चरन धरत सुखदाई। झरि झरि रूप परत तहँ माई ॥ १७ ॥ जो तिहि ठाँव ह्वै देखै आई। तन की ताहि भूलि सुधि जाई ॥ १८ ॥ नवकिशोर वरने क्यों जाही। प्रेम रूप की सीवा नाही ॥ १९ ॥ तिनि कौ रुप कहन को पारै। जो देखे सो पहिले हारै ॥ २० ॥ ऐसे दोऊ आप मे राते। अहनिसि रहत एक रस माते ॥ २१ ॥ अँग अँग विवस और सुधि नाही। प्रेमरसहिँ सब

पान कराहीं ॥२२॥ अद्भुत रस पीवत हैं दोऊ। तिनमें तृपित होत नहिं कोऊ ॥ २३ ॥

दोहा।

मत्त परस्पर रहत ध्रुव एक प्रेमरत रात ।
अति सुरङ्ग लोयन रहे दिन अनुराग चुचात ॥

चौपाई।

हावभाव गुन सींव रँगीली। मुख पर पानिप झलक छवीली ॥ २५ ॥ बैठे कुँवर सोई छवि देखें। लोभी नैन न परत निमेखें ॥ २६ ॥ रहे चकित ह्वै रसिक बिहारी। रूप छटा नहिं जाति सँभारी ॥ २७ ॥ सहजहि प्रेम ढार ढरि जाहीं। तिहि रस जान न घाम न छाहीं ॥ २८ ॥ छिन छिन प्रति रुचि वाढै भारी। रही भूल सी प्रेम निहारी ॥ ३० ॥ कबहू लै मृदु कुसुम सुरङ्गनि। गुहि भूषन बाँधत सब अङ्गनि ॥ ३१ ॥ वार वार पीवत पिय पानी। चितै कुँवरि कछु इक मुसकानी ॥ ३२ ॥ छवि सींवा भुज लतनि पियारी। छवि तमाल पिय भर अकवारी ॥ ३३ ॥ महा

मधुररस युगल विहारा। जहँ लगि प्रेम सकल को सारा ॥ ३४ ॥ रहत दीन ह्वै कौन रँगीली। नखसिख सुन्दर रसिक रसीली ॥ ३५ ॥ तिनकी प्रेम प्रेमवस कीनी। सखि सो कहत सखी रँग भीनो ॥३६॥ दोहा।

जदपि मन चञ्चल हुतौ मोह्यौ अद्भुत रूप ।
बिसरि गई सब चतुरई परत प्रेम के कूप॥३७॥

चौपाई।

प्रिया वदन सुन्दर अति राजे। सहज रूप की चन्द विराजे ॥३८॥ मुसकनि मन्द हँसनि दुति न्यारी। तापर दामिनि कोटिक वारी॥३९॥ झलक कपोलनि की चिकनाई। अँखियाँ रपट गिरत तहँ माई ॥४०॥ अरुन असित सित नैन सलोने। छ्वै छ्वै जात हैं कानन कोने ॥ ४१ ॥ सहज चपल द्रुत उतहि निहारें। बरषत मनु अनुराग की धारें ॥ ४२ ॥

दोहा।

रगभरे अरु रसभरे सरस छबीले नैन ।
सींचत पिय हियकमल को नेहनीर मृदु सैन ॥

चौपाई।

अति अनूप बेंदी जगमगै। चितै चितै पिय पाइनु लगै ॥४४॥ नासिका बेसरि मोती झलकै। मनो रूप की आभा ललकै ॥४५॥ अद्भुत रूप मेह सो बरसै। तऊ कुँवर चातिक ज्यौं तरसै॥ छवि डोलै चरननि सों लागी। उपमा सबै देखि यह भागी ॥४७॥ अद्भुत सहज रूप की माला। ऐसी कुँवरि किशोरी बाला॥४८॥ पहिरि कुँवरि छिन छिनहि सँभारै। ऐसो लोभ न नेकु उतारै॥ कुँवर प्रेम को सागर राजै। प्रिया-प्रेम तहँ भँवर विराजै ॥ ५० ॥ ज्यौं सब जल फिरि फिरि तहँ परई। ऐसे लाल प्रिया दिसि ढरई ॥ ५१ ॥

सोरठा।

प्राननिहू के प्रान, पिय के सर्वसु लाडिलो ।
तिनकी नहि गति आन, देखि देखि जीवत सखी॥

चौपाई।

लालहि प्रिया लगत अरु प्यारी । तापर प्रान करत बलिहारी ॥ ५३ ॥ जहँ जहँ चरन धरति सुकुमारी। सो ठाँ चूमत लाल विहारी ॥

प्रेम अटक को अटपट रीती । जाने सो जिनि के उर वीती ॥ ५५ ॥ कहिवे को नहि प्रेम के बैना । मन समुझै के दोऊ नैना ॥५६॥ जिहि जिहि सुरँग सुमन की ओरै। चितवत नेकु नैन की कोरै ॥५७॥ धाइ कुँवर तिहि फूलहिँ ल्यावे। मन सेवा सौं पियहि रिझावे ॥ ५८ ॥ प्रेम रीति को जाने माई । विन पिय रसिक कुँवर सुख दाई ॥ ५९ ॥ भए दोन यो तनी वडाई । पुनि ताकी बातें न सुहाई ॥६०॥ माँगत हैं धन भाग वडाई । ऐसो कुंवरकिशोरी पाई ॥ ६१ ॥ अब मोको कछु और न चहिये। नैननि मे अञ्जन ह्वै रहिये॥ ऐसे नैन लगे सखि प्यारे। कैसे रहै आप तें न्यारे ॥६३॥ अस न होइ तो यह उर धरही। मो हो तन वेचित यो करहीं ॥ ६४ ॥ धन्य सोइ पलु छिन सखि मेरे। कुँवरि नैन भरि मो तन हेरे ॥ ६५ ॥ दोहा।

कोटि काम सुख होत है हँसि चितवत पिय ओर।
भूलि जाति तन की दसा परसी प्रेम झकोर ॥

चौपाई ।

कुंवर प्रेम जब मनमें आयौ। वचन किशोरी कहन न पायौ ॥ भरि छोयौ अतिही अकुलानौ। पिय किशोर के उर लपटानो ॥ फिरि गयौ प्रेम दुहुनि पर माई । अपनी अपनी सुधि बिसराई॥ पिय पिय प्रिया कहत पिय प्यारी । रहिगे ऐसे भरि अँकवारी ॥ प्रेम नीर उर अञ्चल भीने । चितवत नैन चकोरी कीने ॥ ७१ ॥

दोहा ।

सहज रँगीली लाडिली सहज रँगीलो लाल ।
सहज प्रेम की बेलि मनु लपटै प्रेम-तमाल ॥

चौपई ।

देखि सखी तहँ सबै भुलानी। एक रही मनु चित्र की बानी ॥ एकनि कैं नैनन जल ढरई । मनो प्रेम के झरना झरई ॥ इक गिरी धर अति मुरझानी । रहि गइ एक लता लपटानी ॥ भइ अचेत पुनि चेतनिहारैं । तब सबहिनि मिलि आनि सँभारैं ॥ देखे दोउ रस मे उरझाने । तब सबहनि के नैन सिराने ॥ ७७ ॥

सोरठा ।

जुगल रसिक सिरमौर, सब सखियन के प्रान हैं।
नाहिन गति कछु और, तिनही के सुख,सों रँगी॥

चौपई ।

महा प्रेम गति सब तें न्यारी । पिय जानैं के प्रानपियारी ॥ उरझे मन सुरझत नहिँ केहू । जिहि अँग ढरत होत सुख तेहू ॥ एकै रुचि दुहु मे सखि बाढी । परि गइ प्रेम ग्रन्थि अति गाढो॥ देखत देखत काल नहिँ माईं । तिनको प्रेम कहो नहिँ जाई ॥ सहज सुभाइ अनमनी देखैं । निमिषनि कोटि कलप सम लेखैं ॥ हँसि चितवत जब प्रीतम माहीं । सोई कलप निमिष ह्वै जाहीं॥ खेलनि हँसनि लाल को भावै । नेह की देवी नितहि मनावै॥ कौतुक प्रेम छिनहि छिन होई। यह रस विरला समझै कोई ॥ ज्यो ज्यो रूपहि देखत माईं । प्रेम तृषा की ताप न जाई ॥

दोहा ।

प्रेम तृषा की ताप भुव कैसेहुं कही न जात ।
रूप नोर छिरकत रहै तऊ न नैन अघात ॥८८॥

चौपई।

विच विच उठत हैं प्रेम तरंगा। खेलत हँसत मिलत अँग अंगा॥ नवल राधिका वल्लभ जोरी। दूलह नित्य दुलहिनी गोरी॥ सोभित नित्य सुहाने बागे। नये नेह के रस अनुरागे॥ खेलत खेल तहां मनभाये। यह कौतुक कबहूं न अघाये॥ नेह मञ्जरी सहजहिं भई। हरी एक रस छिन छिन नई॥ सींचत चाह चौप के जल सो। लगि रहि दृग कमलन के दल सो॥

सोरठा।

राधावल्लभ लाल, रसिक रँगीले बिबि कुंवर।
परे प्रेम के ख्याल, रुचत न तिनको और कछु॥

चौपई।

नव-निकुंज रँग रँग चितसारी। राजत नवल कुवर सुकुमारी॥ रस विहार की चौपड खेलै। दोउ प्रवीन असनि भुज मेलै। सखियन तलप विसाल बनाई। कहि न जाइ सोभा कछु माई॥ पासे नैन कटाछनि ढारे। हावभाव रँग रँग की सारे॥ जो अँग लालहि परसौ भावे।

समुझि किशोरी ताहि दुरावै ॥ घत अनेक मन मे उपजाई । हँसे कुंवर जव नहिँ वनि आई ॥ हारि मानि पग परत विहारी । रसिकसिरोमणि की वलिहारी ॥ नैननि सैननि कछु मुसकानी । भिने खेल रस रैनि न जानी ॥ उरज कपोल भ लक छवि छाई । चितवत लाल विवस ह्वै जाई ॥ तवहिँ कुँवर भरि लिय अँकवारी । करुना करि दियो अधर सुधा री ॥ १०५ ॥

दोहा ।

नागरि कोककलानि मे विलसत सुरत विसार।
रोचक रव रसना तहा अरु नूपुर झनकार ॥

चौपाई ।

नवल निकुंज रँगीलि दोउ । तिहि ठाँ सखी नाहिने कोउ ॥ रसिक लाल ऐसे रँग भीने । तन मन प्रान प्रिया कर दीने । कवहूँ रूप सखी को धरहीं । रुचि ले सव वातन को करहीं ॥ नखसिख लो सिगार वनावै । याही सेवा मे सुख पावै ॥ अद्भुत वेनी गूथि वनाई । मनो अलिन की सेना आई ॥ १११ ॥

दोहा।

विच विच मौरी सुरँग दै गूंथी कवरि वनाइ ।
मिलि अनुराग सिँगार दोउ गही सरन मनु आइ॥

चौपाई।

नेननि अञ्जनरेखा दीनी । तवहिँ कुवरि कर आरसी लीनी॥ रीझि सुअंक लाल भरि लीनो । अति हित सों अधरामृत दीनो॥ समुझि सनेह नैन भरि आये। मनो कञ्ज आनँदजल छाये॥ विवस होइ तव उर लपटाने। वीते कलप न नेकु अघाने॥ रहत यहै भ्रम पिय मन माहीं । प्रानप्रिया मोहि मिली कि नाही ॥११७॥

दोहा।

देखत खिलत हँसतही गये कलप वहु वीति ।
पल समान जाने नहीं विलसत दिन यह रीति॥

चौपाई।

कौन प्रेम तिहि ठाँ को कहिये । दुहू कोट चितवत सखि रहिये॥ नित्य प्रेम एक रस धारा। अति अगाध जिहि नाहिन पारा ॥ महा मधुर रस प्रेम को प्रेमा। पीवत ताहि भूलि गये नेम॥

तैसी सखी रहै दिन राती। हित ध्रुव जुगलनेह मदमाती ॥ १२२ ॥

दोहा।

रस निधि रसिककिशोर विवि सहचरि परमप्रवीन। महा प्रेम रस मोद मे रहत निरन्तर लीन॥१२३॥

चौपाई।

प्रेम बात कछु कही न जाई। उलटी चाल तहा सब भाई ॥ प्रेम बात सुनि बौरा होई। तहा सयान रहै नहिं कोई॥ तन मन प्रान तिही छिन हारै। भली बुरी कछु वे न बिचारै॥ ऐसी प्रेम उपजिहै जबही। हित ध्रुव बात बनैगी तबहीं॥ ताकी जतन न दीसै कोई। कुँवरि कृपा तें कहा न होई॥ बृन्दावन रस सब ते न्यारी। प्रीतम जहा अपनपौ हारौ ॥ श्रीहरिवंशचरन उर धरई। तब या रस मे मन अनुसरई॥ मो मति कवन कहै यह वानी। तिन चरनन बल कछुक बखानी॥ जुगल प्रेम मनही मे राखौ। अनमिलि सो कबहूँ जिनि भाखौ॥ १३२ ॥

दोहा ।

पिय प्यारी कौ प्रेमरस सकहि तौ मनमे राखि।
या रस के भेदौ बिना अनमिल सो जिन भाखि॥

चौपाई ।

प्रेम बात आनँद मैं माई। ताहो सुनत हियौ सु सिराई ॥ जहँ लगि सुख कहियत जग माहीं। प्रेम समान और कछु नाहीं ॥ यह रस जाके उर नहि आयो । तिहि जग जन्म वृथाहि गँवायो ॥ सब रस मै देखि अवगाही । सब कौ सार प्रेम रस आही ॥ प्रेम छटा जिहि उर पर परही । सो सुख स्वाद सबै परहरही ॥ १३८ ॥

दोहा ।

जिहँदुखसमनहिँऔरसुख सुखकौ गति कहै कौन।
वारि डारि ध्रुव प्रेम पर राज चतुर्दश भौन ॥

चौपाई ।

जहँ लगि उज्वल निरमलताई । सरस सनिग्ध सहज मृदुताई ॥ मादिक मधुर माधुरी अगा । दुर्लभता के उठत तरगा ॥ नव तन नित छिनही छिन माही । इक रस रहत घटत रुचि

नाहीं ॥ अतिहि अनूपम सहज सुछन्दा । पूरन कला प्रेम वर चन्दा ॥ सब गुन तें ताको गति न्यारो । जाकें वस भे लालविहारी ॥ १४४ ॥

दोहा ।

कहि न सकत रसना कछुक प्रेम स्वाद आनन्द।
को जाने ध्रुव प्रीति रस बिन वृन्दावनचन्द ।

चौपाई ।

प्रेम की छटा बहुत विधि आही । समुझि लई जिन जैसो चाही ॥ अद्भुत सरस प्रेम निज सोई । चित्त चलन की जिहि गति खोई ॥ रसिक रसिकनी गुन अनुरागे । एक प्रेम दम्पति मन पागे ॥ इक छत प्रेम सार निज धारा । जुगल किशोर निकुंज विहारा ॥ यह विहार जाकि उर आवे । ताहि न बात दूसरी भावे ॥ औरो भजन आहिँ बहुतेरे । ते सब प्रेम भजन के चेरे॥

दोहा ।

नारदादि सनकादि ध्रुव उद्धव अरु ब्रह्मादि ।
गोपिन को सुख देखि किय भजन आपनो वादि॥

चौपाई।

तिन गोपिन के दुर्लभ माई। नित्य विहार सहज सुखदाई॥ सिव श्रीपति यद्यपि ललचाहीं। मनप्रवेश तिनहू को नाहीं॥ ऐसे रसिक किशोर विहारी। उज्जल प्रेम विहार चहारी॥ अति आसक्त परस्पर प्यारे। एक सुभाव दुहुनि मन हारे॥ रस मे बटी नेह की वेलो। तिहि अवलम्बे न वल-नवेली॥ १५७॥ दोहा।

हित ध्रुव दुर्लभ सबनि ते नित्य विहार सरूप।
ललितादिक निज सहचरी सो सुख लहत अनूप॥

चौपाई।

दुर्लभ को दुर्लभ अति माई। वृन्दाविपिन सदन सुखदाई॥ वेलि फूल फल ललित तमाला। प्रेमसुधा सींचत सब काला॥ मृगी विहगी सखी अपारा। सब के तिहि ठा यहै अहारा॥ नित्य किशोर एकरस भीने। तन मन प्रान नेह बस कीने॥ यहि विधि विलसत प्रेमहि सजनी। जानत नहि कित वासर रजनी॥ नेहमञ्जरी हित ध्रुव गावै। दम्पति प्रेममाधुरी पावै॥१६४॥

दोहा।

प्रेमधाम वृन्दाविपिन मध्य मधुर वरजोर ।
सरिता रस सिंगार की जगमगात चहुँओर ॥

सोरठा।

प्रेममई दोउ लाल, प्रेममई सहचरि लहा
सेवत है सब काल, प्रेममई वृन्दाविपिन ॥१६१

दोहा।

वैभव सब ऐश्वर्यता ठढी सेवत दूरि ।
परसन पावत कबहु नहि श्रीवृन्दावन धूरि ॥
ब्रह्मजोति को तेज जहँ जोगेश्वर को ध्यान
ताही को आवर्ण तहँ नहिं पावे कोउ जान ॥
नेहमञ्जरी मञ्जुरस मञ्जुल कुञ्जविलास ।
जिहँ रस के गावत सुनत रसिकन होत हुलास॥
रूप रग की वेलि मृदु छवि के लाल तमाल ।
नेहमञ्जरी दुहुनि मे हरी रहत सब काल॥१७०॥

इति श्री नेहमंजरी सम्पूर्णम् ॥

अथ रहस्यमञ्जरी लिख्यते।

दोहा।

करुनानिधि अरु कृपानिधि श्रीहरिवंश उदार।
वृन्दावनरस कहन कौं प्रगट धर्‍यो औतार॥१॥

चौपाई।

वृन्दावनरस सबको सारा। नित सर्वोपरि जुगलविहारा॥ नित्य किशोर रूप की रासी। नित्य विनोद मन्द मृदुहासी॥ नित ललितादि भरी अनन्द। नित प्रकास वृन्दावनचन्द॥ कुञ्जनि सोभा कहा बखानौ। छवि फूलन सौं छाई मानौ॥ राजत सुमन द्रुमनि बहु रंगा। मानो पहिरे बसन सुरंगा॥ नाचत हंस मयूरो मोर। शुक सारिक पिक नद चहुंओर॥ झलमलात महि कहि नहि जाई। चिन्तामणि मे हेम जराई॥ सोभा दुतिय बढी अधिकाई। फूलन की मनु अवनि बनाई॥ छवि सो जमुना बहै सुहाई। मनो अनन्द दै चल्यो माई॥ जहँ तहँ पुलिन नलिन कल कूला। फूले सबके मनोरथ

फूला ॥ फूले फिरत मधुप मधुमाते । जलजन सौरभ के रस राते ॥ सीतल मन्द समीर सुवासा। वृन्दाकानन रंग हुलासा ॥ सुख की अवधि प्रेम को ऐना । सेवत मैननि की सत सेना ॥१८॥

दोहा ।

वृन्दावनरस कह कहौं कैसेहुं कहत बनै न ।
नैनन के रसना नहीं रसना के नहिं नैन ॥१५॥

चौपाई ।

विहरत तहां परम सुकुमारा । रूप माधुरी को नहि पारा ॥ प्रेममगन अलबेली भांति । जगमगि रह्यो वन अगन क्रांति॥ सखी सबै हित की हितकारनि। जुगल चितवनी जाननिहारनि॥ तिनहीं के रँग सो अनुरागी । महा मधुर सेवा रस पागी ॥ रुचि लै रुचि सो दुहुनि लडावैं । पलु पलु सुख को रंग बढावै ॥ फूल सो भाजन भरि मधु आने । फूल चँदोवा छवि सों ताने ॥ फूल सो फूलनि सेज बनाई। अति सुगन्ध सोंधै छिरकाई ॥ तापर राजत रँग विवि ओर । सुख

जोहत ज्यों चन्दचकोर ॥ नेकु चितै तिरछै मुसकानो । लालहिँ सुधि बुधि सबै भुलानो ॥२४॥

दोहा।

बसो जु प्यारे लाल उर वह चितवनि मुसकानि।
तब तें कबहू ना छुटी चुभी जु उर मे आनि ॥

चौपाई।

तिनको प्रेम औरही भाति। अद्भुत रीति कही नहिँ जाति ॥ जो कल्पना करि वे उर आने। तब रसना जो कछू बखाने ॥ जाको हियो सरस अति होई। यह रस रीतिहि समुझै सोई ॥ सूछम प्रेमविरह सुखदाई। दिन सँजोग मे रहत है माई ॥ देखतही अनदेखी माने। तिनकी प्रीतिहि कहा बखाने ॥ प्रेम लालची लाल रँगीलौ। अवधि प्यार की रसिक रसीलौ ॥ कर अँगुरिन भुज मूलनि परसै। अधर-पान रस को पिय तरसैं ॥ छुइ न सकत उरजनि कर काँपे। चतुरि कुँवरि अञ्चल सो ढाँपे ॥ सो वह छटा प्रेम की न्यारी। लालहिँ विवस करत अति भारी॥

तबहिँ सँभारि लेति सुकुमारी । अधर कपोलनि चूमत प्यारी ॥ जब देखो अँखिया न उघारी । प्याइ जिवाई अधरसुधा री ॥ जबहीं उर सों धुरि लपटाही । तब नैना बिरही ह्वै जाही ॥ छुटै न यहिँ छवि देख्यो करै । विरह आनि अङ्गनि स ञ्चरै ॥ भाँति चटपटा मो चित हर्यो । जात नहीं उर धीरज धर्यो ॥ छिन छिन दसा और की औरै । यामे रहत सखी सिरमौरै ॥ ४० ॥

दोहा ।

प्रेम अटपटी चटपटी रही लाल उर पूरि ।
और जतन ताको न कछु प्रिया सजीवनि मूरि॥

चौपाई ।

विरह सँजोग छिनहि छिन माही । यद्यपि यौवनि मेले बाहीं ॥ यहि विधि खेलत काल्प बिहाने । परमरसिक कबहूं न अघाने ॥ एक समै मुख की छवि पानिप । निरखत भूलि सबै सयानप ॥ चाह प्यार की यों फिरि गई । सोई आनि बिच अन्तर भई ॥ कुँवरि छबीली मनि धरि आगी । विवस होइ पिय विल्पन लागी ॥ चितवत चित

वत लालविहारी। कहत यहै कहँ कहँ सुकुमारो॥ प्रेम तरङ्ग कहे नहिँ जाही । छिन छिन जो उपजत मनमाहीं ॥ ४८ ॥

दोहा।

कौन प्रेम किहि फन्द परि मोहन-नवलकिशोर।
भूलि रहीं चितवत खरो सखीमाल चहुंओर ॥

चौपाइ।

रस-निधि रसिक प्रवीन पियारो। लालहि राखत ज्यों फुलवारो । प्रेम प्यार जल सींच्यौ करही। पलु पलु प्रति तिनके रँग ढरही ॥५१॥

दोहा।

फूल पान ज्यों राखही ढाँपि प्यार की चोर ।
छिन छिन तिनको छिरकही नेह कटाछन नोर॥

चौपाई।

रसिकमौलि मनि लालविहारो। जिनकी सर्वस प्रानपियारी॥ नैन जोरि देखत पिय रूपहिँ। नैन माधुरी झलक अनूपहिँ॥ कौन भाँति छवि सुख को कहिये । चितवत सखी भूलही रहिये ॥ भौहनि भाइ कटाच्छ तरङ्गा। गन्यो

लाल मन प्रेम अनङ्गा ॥ खेद काम्य वे पगु अंग
अङ्गा । प्रानप्रिया भरि लेत उछङ्गा ॥ परसतहूं
परस्यो नहिँ जानें । छिन छिन नई नई रुचि
माने ॥ सो गति चितै सखी वलि जाही । वारि
फेरि अञ्चल वलि जाहीं ॥ प्रेम प्यार वनत न
मन सरस्यो । और स्वाद कवहूं नहिँ परस्यो ॥
रूप रङ्ग सौरभता तन को । जौवनि यहै दिनहि
पिय मन को ॥ देखिवौ जहाँ विरह सम होई ।
तहँ को प्रेम कहा कहै कोई ॥ ६२ ॥

दोहा ।

अटपट रँग को विरह सुनि भूलि रहे सव कोइ ।
जल पीवत है प्यास को प्यास भयो जल सोइ ॥

चौपाई ।

महा भाव सुखसार सरूपा । कोमल सील
सुभाउ अनूपा ॥ सखी हेत उदवर्त्तन लावैं । आ
नँद-रस सो सवै अन्हावै ॥ सारी लाज की अति
ही घनी । अँगिया प्रीति हिये कसि तनी ॥ हाव
भाव भूषन तन वने । सौरभ गुनगन जात न
गने ॥ रसपति रस की रचि पचि कीनी । सो

अञ्जन लै नैनन दीनो ॥ मेहदी रँग अनुराग सु-रङ्गा । कर अरु चरन रचे तिहि रङ्गा ॥ वङ्क चितवनो रस सों भीनी । मनु करुना की वरषा कीनी ॥ झलमल रहा सुहाग की जोती । नासा छवि रहि पानिप मोती ॥ नेह फुलेल वार वर भीने । फूल की फूलनि सों गुहि लीने ॥ मौरी रँग अनुराग की डोरी । तिहिँ कर बाँध्यौ पिय मन गोरी ॥ ७२ ॥

दोहा ।

हासि झलक हारावली अधर-बिम्ब अनुराग ।
चिबली है वा रूप की नव सत पोत सुहाग ॥

चौपाई ।

ऐसी प्यारी पिय उर बसै । ज्यों घन मे दिन दामिनि तरसै ॥ अद्भुत वृन्दावन रसखानी । अ-द्भुत दुलहिनि राधारानी ॥ अद्भुत दुलह नित्य किशोर । अद्भुत रस के चन्दचकोर ॥ अद्भुत जहँा प्रेम को रङ्ग । अद्भुत बन्यौ दुहुन को सङ्ग ॥ अद्भुत सहज रूप सुकुमारी । वृन्दावन की मनि उँजियारी ॥ तिनको सेवत लालविहारी।

तन मन वचन रहे तहँ हारी ॥ अद्भुत प्रेम एक व्रत लीनो । छाड़ि प्रियहि मन अनत न दीनो॥ छिन छिन औरै और सिंगार । गुन मालिनि पहिरावति हार ॥ ठाढे होइ रहत करजोरें । तै बलाइ वारत तृण तोरें ॥ ८३ ॥

दोहा ।

चितवत जितही लाड़िलो तितही मोहनलाल।
सो ठा प्यारी ह्वै गई लखो प्रीति की चाल ॥

चौपाई ।

तब मुसकाइ लिये उर लाई । रीझि प्रेम माला पहिराई ॥ अद्भुत प्रेम विलास अनङ्गा। अद्भुत रुचि के उठत तरङ्गा ॥ अद्भुत प्रेम कह्यौ नहिं जात । रसिक रँगीले तिहँ रँगरात ॥ ललित विशाखा सखी पियारो । दम्पति मनसुख समुझनहारी ॥ सब सखियनि के दोउ प्यारे जीवनि प्रान चखन के तारे ॥ ८४ ॥

दोहा ।

भुज सो भुज उर सो उरज अधरअधर जुरि नैन।
ऐसी विधि जो रहैं तो कछुक होइ चितचैन ॥

चौपाई।

या सुख पर नाहिन सुख और। तिहि रस रचे रसिक सिरमौर॥ या रँग सो ध्रुव जो मन लावै। ताको भाग कहत नहिँ आवै॥ ऐसे अद्भुत भक्त अनूप। जिनके हिये रह्यो यह रूप॥ श्रीहरिवंशचरन उर धारी। सो या रस में ह्वै अनुसारी॥ श्रीहरिवंशहि हित सों गावै। जुगल विहार प्रेमरस पावै॥ जापर श्रीहरिवंश क्रपाल। ताको बाह गहैं दोउ लाल॥ श्रीहरिवंश हिये जो आनै। ताको वह अपनो करि जानै॥ यह रस गायो श्रीहरिवंश। मुक्ता कौन चुगै विन हंस॥ रसद रहस्यमञ्जरी भई। छिन छिन जोति होति है नई॥ दुहुवनि मध्य खिनी ले बई। आनँदवेलि बढी रसमई॥ श्रीहरिवंश प्रगट करि दई। जाकौ भाग तिनहिँ ध्रुव लई॥ १०१॥

दोहा।

नित्यहि नित्य विहार दोउ करत लाडिली लाल।
हन्दावन आनन्दजल वरषि रह्यो सब काल॥

रूपरँगीली सभा सो प्रेमरँगीली रात ।
सखी सहेली संग रँग अद्भुत सहज समाज ॥
यह सुख देखत कण्ठ दृग रुके न आनँद-वारि।
और अङ्ग हारे सबै नैन न मानत हारि ॥१०४॥
सत्रह से है जन अरु अगहनपक्ष उँजियारि ।
दोहा चौपाई कहो ध्रुव इक सत परि चारि ॥

इति श्री रहस्यमञ्जरी सम्पूर्णम् ।

अथ सुखमञ्जरी लिख्यते ।

दोहा ।

सखी एक हित की अधिक आनँद अवसर पाइ ।
दसा कुँवर को प्रिया सो कहति बनाइ बनाइ॥
चाह मदन की बिथा को नाहिन है कछु ओर ।
पलु पलु पिय हिय मे बढै यहै सोच मन मोर॥
सिथिल अंग बलहीन सखि कछुक भयो तन छीन।
करि उपाइ प्यारी प्रिया तुम जल हो वे मीन ॥

सोरठा ।

मिटत नहिन यह रोग, तुम हो मूरिसजीवनी ।
बन्यो आनि सजोग, अब बिलम्ब कीजै न बलि॥

दोहा ।

उनके लच्छन कहौं कछु चित दै सुनि सुकुमारि।
नारी मैं प्रानहि बसैं नागे नारि निहारि ॥
जैसें बिथा बढै नहीं कीजे जतन बिचारि ।
दैवे को कछु और नहिँ दैहै प्रान-निवारि ॥६॥
सुनत सखी के वचन ये करुना भई अपार ।
तबहिँ लाडिलो हेत सो करन लगी उपचार ॥
प्रथमहि नारो देखि कै हिय कर धाखौ आनि ।
रोम रोम सानँद भयो परस होतही पानि ॥८॥

वहुत भाँति की श्रोषधी चितवनि मुसकनि भाइ।
सँभराये तिहि छिन सखी अधरसुधारस प्याइ॥
कोककला के रस विविधि जानति परमउदार।
दियो किशोरी प्यार सौं अङ्क मृगाङ्क सँवारि॥
नैन कटाच्छ सुवास चँग चितवनि प्यारी कीन।
अतिप्रवीन रस लाडिली लालहि पथ मन दीन॥
परिरम्भन चुम्बन अधिक रति-विलास आहार।
तुष्ट पुष्ट वल रुचि भई वाढो क्षुधा अपार॥१२॥
गरे पितम्बर मेलि के चरनन पर धरि सीस।
दियो अपनपौ रीझि तब श्रीवृन्दावन-ईश॥१३॥
पुनि पग परसे सखिन के कीन वडो उपकार।
तासो इतनी कहि कुवर पहिरायो उर हार॥
मदन क्षुधा पानिप तृपा सरिता बढी गँभीर।
प्रेममगन विलसत रहैं पावत नाहिन तीर॥१५॥
विविध विहार विनोद रँग उठतहिँ मदन तरङ्ग।
अग अग सब चपल भे नितँत मनहु सुघग॥१६॥
हार वलय किङ्किनि झलक नूपुर की झनकार।
परे मीन मन दुहुनि के रसप्रवाह की धार॥

हावभाव लावण्यता अद्भुत प्रेम बिहार ।
केलि खेल निवरत नहीं तैसइ खिलनहार ॥१८॥
रूपसुधा पीवत दोऊ नहिँ जानत दिन रैन ।
पल को अन्तर परत नहिँ जुरे नैन सौं नैन॥१९॥
तृपित न कबहूं भये हैं जदपि मिले अँग अग ।
रुचि न घटै छिन छिन बढै प्रेम अनग तरग ॥
छके रहत दोउ लाडिले यह रसरग बिहार ।
सँभरावत छिन छिन सखी तब कछु होत सँभार॥
ज्यौं ज्यौं करत बिहार दोउ बाढत चाह बिलास।
जल पीवत है प्यास को सोइ जल भयौ पियास॥
रहे लपटि आनन्द सौं आनँद को पट तानि ।
हित ध्रुव आनँद कुञ्ज मे रहि रह्यो आनँद जानि ॥
यह सुख निरखति सहचरी जिनिके यहै अहार।
प्रेममगन आनद रस रह्यौ न देह सँभार ॥२४॥
अद्भुत वैदक मधुररस दोहा भये पचीस ।
सुनत मिटै हृदरोग ध्रुव झलकहि उर बन ईस॥

इति श्रीसुखमञ्जरी सम्पूर्णा।

अथ रतिमञ्जरी लिख्यते ।

दोहा ।

हरिवंश नाम ध्रुव कहतही बाढे आनँद बेलि ।
प्रेम रंग उर जगमगै जुगल नवल रस केलि ॥१॥
श्रीहरिवंशपद बन्दि कै कहत बुद्धि अनुसार ।
ललित बिसाखा सखिन कौ यह रस प्रान अधार॥
एतौ मति मोपै कहाँ सिन्धु न सीप समाइ ।
रसिक अनन्य कृपा बल जो कछु बरन्यो जाइ ॥

चौपाई ।

प्रथमहि सुमिरो श्रीवृन्दावन । जा देखत फूलै यह तन मन ॥४॥ कुन्दनरचित खचित धर बनी। सो छबि कैसे जात है भनी ॥५॥ रज कपूर की झलकनि न्यारी । हियौ सिराइ निरखि सो भारी ॥६॥ ललित तमाल लता लपटानी । कूजत कोकिल अति कल बानी ॥७॥ तपनसुता छवि जात न बरनी । रसपति रस ढार्‍यौ मनु धरनी ॥८॥ कुञ्ज सुरङ्ग सुदेस सुहाई । रतिपति रचि रचि रुचिर बनाई ॥ ९ ॥

दोहा।

कुमकुम अम्बर अगर सत वेलि चमेली फूल ।
सखियनि सब कौ मोद लै रची सेज सुख मूल॥

चौपाई।

अब बरनौं निस रससिंगार। सुखनिधि हरि सनि कुञ्जविहार ॥ ११ ॥

दोहा।

रूपपुञ्ज रसपुञ्ज दोउ पौढे प्रेम प्रजङ्क ।
विलसत नवलविहारवर सब विधि होइ निसङ्क॥

चौपाई।

नवल नायिका अति सुकुमारी। नाइक सर सनि कुञ्जविहारी ॥१३॥ अति प्रवीन रस कोक मे दोउ। राजहस गति घटि नहि कोउ ॥१४॥

दोहा।

रुप मदन रस मोद को सहज जुगल वर देह ।
बैठे प्यार की सेज पर भरे मोद मृदु नेह ॥१५॥
एक रग रुचि एक वय एक प्रान द्वे देह ।
पलु पलु हिय हुलसत रहत अरुझे सरस सनेह॥

चौपाई।

सब विधि नागरि नवलकिशोरी। सील सुभाइ नेह निधि गोरी ॥ १७ ॥ अति गभीर धीर रस

वाला। परम सलज्ज रूप की माला ॥१८॥ नवल रँगीली रानत खरी। रगलता रसभाइन भरी ॥

दोहा।

कोमल कुन्दन वेलि मनु सीची रग सुहाग ।
मुसकनि लागे फूल फल उरज भरे अनुराग॥२०॥

चौपाई।

वरपत छवि वरषा सी माई। चातिक लाल न पिवत अघाई ॥ ११ ॥ आतुर प्रिय आधीन अधोरा। जाँचत रहत दसन वर वीरा ॥ २२ ॥ छिन छिन नई नई छवि औरे। सुधि नहि र हन देत सिरमौरे ॥ २१ ॥ जिहि अँग ओर परे मन जाई। छुटे न तहँ तें रहे लुभाई ॥२४॥

दोहा।

ज्यौं ज्यौं सर मे जल बढे कमल बढे तिहि भाँति।
ऐसे पिय की रुचि बढे निरखि प्रिया तन काँति॥

चौपाई।

अद्भुत सहज माधुरी अङ्गा। चितै रीझि भरि लेत उछङ्गा ॥२६॥ झटकनि लटकनि की छवि न्यारी। यह सुख जानत देखनहारी॥२७॥

चितई नेकु चपल भ्रूभङ्गा। काँपत लाल सकल अँग अङ्गा ॥ २८ ॥ वचन सगर्व सुनत हुँकारा। प्रीतम देह न रही सँभारा ॥ २९ ॥ बिवस भये बिरहज दुख भारी। लटकि परे गहि चरन बिहारी ॥ ३० ॥ प्रेम प्यार की मूरति प्यारी। लिये लाल भरि कै अकवारी ॥३१॥ रही लाइ हित सौं उर ऐसे। खची नीलमनि काञ्चन जैसे ॥ ३२ ॥

दोहा।

बदन कमल सुठि सोहनो रस भरि अधर सुरंग।
मलु मलु प्यावति लाडिली उठत सुगन्ध तरंग॥

चौपाई।

अधरनि रस सींच्यौ नव बाला। फूल्यौ मन मनु मैन तमाला ॥३४॥ अति सुकुमार केलि रँग भीने। छिन छिन उपजत भाइ नवीने ॥ ३५ ॥ प्रवल चोप बाढी दुहुं माहीं। रस सम तूल कोउ घटि नाहीं ॥३६॥ सुरति समुद्र परे दोउ प्यारे। अम्बर लाज दूरि करि डारे ॥ ३७ ॥ भूषन सब दूषन करि जाने। तन मन एक होइ लपटाने॥

दोहा ।

सुख वारिध मे परतहो गए कूटि पट नेम ।
मेड तहाँ कैसे रहै उमडत है जहँ प्रेम ॥३९॥
वढी तृपा निज केलि की रस लम्पट न अघात।
चरन छुवत हाहा करत रीभि रीभि वलि जात॥

चौपाई ।

अति उदार नागरि सुकुमारी । पिय रुचि जानि केलि विस्तारी ॥ ४१ ॥ रति विपरीत विलसत बहु भाँतिनि । चूमत अधर नैन मुसकातिनि ॥४२॥ रस के वस ह्वै रस मे भूली । बात नेम कोने सब भूली ॥४३॥ विरमि विरमि बानी पिय बोले । श्रमित जानि अञ्चल भकभोले ॥

दोहा ।

नायक तहँा न नायिका रस करवावत केलि ।
सखी उभै सगम सुरस पिवत नयन पुट झेलि ॥

चौपाई ।

तजि मरजाद विलासहिँ करही । रतिजुत मदन कोटि दुति हरहीँ ॥४६॥ आलिङ्गन चुम्बन नव दये। अगनि के भूषन अँग भये॥४७॥ अञ्जन

अधर पीक लगि नैननि। सुख मे कहत अटपटे वैननि ॥ ४८ ॥ आनँद मोद बढ्यो अधिकाई। बिच बिच लाल विवस ह्वै जाई ॥४६॥ दुहु मन रुचि एकै ह्वै जबही । सुख की वेलि बढै ध्रुव तबहीं ॥५०॥ गौर स्याम अँग मिलि रहे ऐसे। सोसी रँग झलकत तन तैसे ॥५१॥ रसकी अवधि इहाँ लौं माई। बिबि तन मन एकै ह्वै जाई ॥

दोहा।

एक रंग रुचि एक वय एकै भाँति सनेह ।
एकै सील सुभाव मृदु रस कै हित है देह॥५३॥

अरिल।

चहूँओर रहि छाइ प्रेम के प्यार सो ।
पिय हिय सो रहि लाइ हिये के हार सो॥५४॥
तिनके रस की बात कही नहि जात है ।
जानति नाहिन राति कीधौ ध्रुव प्रात है ॥

चौपाई।

मादिक मधुर अधर रस प्यावै। नैन चूमि नासा चटकावै ॥५६॥ ऐसे जतननि पियहि ज गावै । रति नागरि रति-कीलि बढावै ॥ ५७ ॥

अधरनि दसन लगे जब जाने । रोम रोम रति पति सरसाने ॥ ५८ ॥ देखि रसिक रति रीझि भुलानी । हियो खोलि पिय हिय लपटानी ॥

दोहा ।

ज्यावति प्यारी प्यार सों प्रेमरसासव-सार ।
त्यों त्यों प्यारेलाल के बाढ़त तृषा अपार ॥५६॥

चौपाई ।

सुख-सरिता उमडी चहुंओरें । झलमलात सोभा तन गोरें ॥ कंचुकि दरकि तनी सब टूटो। सगबगि अलकै सोभित छूटो॥ श्रमजलकन दुति कहा बखानो । छवि के मोती राजत मानों ॥ रतिविलास की उठत झकोरें । चलत दृगञ्चल चञ्चल कोरैं ॥ सुखसर में दोउ करत कलोलैं । मानो छवि के हंस कलोलैं॥ ऐसो उमड़ि महा रस ढरो । मनो प्यार की बरषा करो॥ रस भिर गयो दुहुन पर माई । भूली तन गति रति न भुलाई ॥ ६६ ॥

दोहा ।

लाख तृषा को सिन्धु है प्रेम उदधि सुकुमारि ।
इकरसप्यावतपिवत दोउ मानत नहि कोउ हारि॥

चौपाई ।

होत दिवस जबहीं पिय प्यारी । सावधान तहँ सखि हितकारी ॥ कुवरि अधर पिय अधरनि लावै । रूप वदन नैना दरसावै ॥ पिय के कर लै उरज छुवावै । मनहु मैन को खेल खिलावै ॥ उर सी उर मिलि भुजनि भरावै । चरन पलोट सेज पौढावै ॥ ऐसी भातिन लाड लडावै । ताहा सौं अपनो ज्यो ज्यावै ॥ ७२ ॥

दोहा ।

प्रेम-रसासव छकि दोऊ करत विलास विनोद।
चढत रहत उतरत नहीं गौर स्याम छवि मोद॥

चौपई ।

मेड तोरि रस चल्यो अपारा । रही न तन मन कछु सभारा ॥ सो रस कहौ कहा ठहरानो॥ सखियन के उर नैन समानो ॥ तिहि अवलम्बि सबै सहचरी । मत्त रहत ठाढी रँग भरी ॥ या रस की जाको रुचि रहै । भाग पाइ सो कछु इक लहै ॥ सखियनि सरन भाव धरि आवै । सो

या रस के स्वादहि पावै ॥ छाडि कपट भ्रम दिन दुलरावै । ताको भाग कहत नहिँ आवै ॥ रति-मंजरी रँग लागै जाके । प्रेम कमल फूलै हिय ताके ॥ यह रस जाके उर न सुहाई। ताकौ संग वेगि तजि भाई ॥ ८१ ॥

दोहा ।

या रस सौं लागौ रहै निसदिन जाकौं चित्त ।
ताकौ पदरज सीस धरि वन्दित रहु ध्रुव नित्त ॥

इति श्री रतिमंजरी सम्पूर्णा ॥



अथ वनविहारलीला।

दोहा।

रसिक नृपति हरिवंश जू परम कृपाल उदार।
राधा-वल्लभलाल यश कियौ प्रगट ससार ॥१॥
वनविहार छवि कह कहो सोभा वढी विसाल।
मानो व्याहन चढे हैं राधावल्लभलाल ॥ २॥
मौरी मौर जराव की अरु मोतिन के हार।
दुलहिनि दुलह अति वनि रूप सींव सुकुमार॥
फूलनि के वनें सेहरे झलकत प्रगट सुहाग।
वसन सुहाने फवे तन मनो पग्यो अनुराग ॥४॥
नखसिख लौं भूषन सजे फवे छवीली भांति।
झलमलात अँग अग प्रति मनि रतननि की काँति॥
कहा कहो वानिक वनक सुन्दर परम उदार।
चरनन तर लोटत विवस निरखि रूप सिंगार॥
जुरी वरात सखीन की कोटिन जूथ अपार।
उमडे छवि के सिन्धु है मनु दूलह सुकुमार॥
सवकै सीसनि रहे फवि सीसफूल की पाति।
मनो छत्र सिंगार के झलकि रहे वहु भाति॥

किङ्किनिधुनि मनु दुन्दुभी बाजत है चहुओर ।
जहा तहा आनन्द भरि निर्तत मोरी मोर ॥६॥
अगनि छवि भूषन झलक फैलि रहो बन माहिँ ।
सखि मराल दुति जहा लगि निरखत सबै लजाहिँ॥
छाडत छवि की फुलझरी मदन हवाईदार ।
निसि तें मानो दिन भयो कोटि भानु उँजियार॥
छुटत अलौकिक ओचपा जहँ तहँ फैलो जोति।
काञ्चन को बरषा मनो वृन्दावन में होति ॥१२॥
कुञ्ज कुञ्ज ऐसे बने मानो मत्त मतंग ।
वागेही जनु पवन के निर्तत लता तुरंग ॥१३॥
फूले द्रुम फूली लता फूले जहँ तहँ फूल ।
बहुत रंग वृन्दाविपिन पहिरे मनो दुकूल ॥१४॥
उज्जल परम सुगन्ध अति नव कपूर की धूरि ।
बढ़ी धूंधि काहत न बनै रहे अकास सब पूरि ॥
बरषा रूप सुहाग की बरषत बन चहुँओर ।
जहा तहा आनन्द भरि निर्तत मोरी मोर ॥१६॥
ऋतुराज पखावज लिये बीना सरद प्रवीन ।
ग्रीषम ताल रसाल धरि पावस छाया कीन ॥

कीर कपोतो भँवर पिक करत मधुर सुर गान।
भींजि सब आनन्द रस उपजत नव नव तान॥
उग्यो गुलाल सुरग बहु सब वन छयो सुहाग।
मानो द्रुम द्रुम ते भयो प्रगट रग अनुराग॥१८॥
कोलाहल सब हिजन को तहा नाहिने घोर।
श्रवनन सुनियत नाहिँ कछु ऐसो ह्वै रह्यो सोर॥
चौर चलनि सखियन करन धुज पताक बहु रग।
सोभा को सागर बढ्यो मानो उठत तरग॥२१॥
फूल फूल भूलो फिरै देखत जहँ तहँ फूल।
झलमलाति दीपावली मनि मे जमुनाकूल॥
कुज कुंज उँजियार मनु कोटिक भान प्रकास।
मन्द सुगन्ध समीर वह सब बन भयो सुवास॥
वन्दीजन सब खग मनो कहत है विरद रसाल।
गावत रागिनी राग मिलि गुहि रागन की माल॥
करत चतुरई चित्र फिर भीनो रँग अनुराग।
उज्जलता को सँग लिये बँधो प्यार को ताग॥
कुज मडल रतनन खचो कीनै चित्त रसाल।
प्रहूयोर रङ्ग झलकि के झालरि मोतिन लाल॥

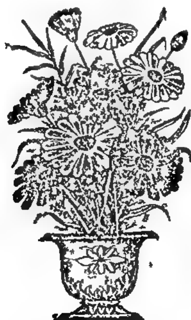
भूमि रही फूलनि लता वहु विधि रंग अनेक ।
फूले आनँद रंग भरि निर्तत केकी केक ॥२७॥
ललितादिक निज सहचरी जुरी तहा सव आनि।
कोलाहल आनन्द को कहँ लगि सकों वखानि॥
वेंदी सेज सुदेस रचि फूलनि आसन वानि ।
नव दुलहिनि दूलह नवल वैठाये तहँ आनि ॥
सखियनि अँचल दुहुनि के ले गठजोरा कीन ।
मिलवाई ग्रीवनि भुजा मानों भाँवर दीन ॥३०॥
सोभा भुव तिहि समै को वरनें ऐसो कौन ।
रसना कोटि सरस्वती तक रहै ह्वै मौन ॥३१॥
भीने अञ्चल मे चपल कजरारे दोउ नैन ।
निरखत पिय व्याकुल भये गह्यो आनि मनमैन॥
अतिसलज्ज सुकुमारि रहि नखसिख लो सव ढाँपि।
छुयो चहत छुइ सकत नहिँ उठत कुंवर कर काँपि॥
सखियन के उर फूल भइ दूधा भातो हेत ।
ऐसें वैठी मुरि कुवरि अञ्चल छुवन न देत ॥३४॥
सखियन कीनें जतन वहु जुरवाये चख चारि ।
रहिगये चितवत चित्र से मोहन वदन निहारि॥

निरखत छवि को ससिवदन वाढी फूल अपार।
सुन्दर मुख दिखरावनी पहिरायो हित हार॥३६॥
घूघटपट के छुवतहीं मुरि बैठी सुकुमारि ।
रसिकलाल पायनि परत सकत न धीरज धारि॥
समुझि दसा पिय को तबहि चितई कछु मुसकाइ।
फूल्यो पिय को हिय कमल सो सुख कह्यो न जाइ॥
नेकुहिँ घूघट के खुलत भयो प्रकास सत चन्द।
भई किशोर चकोर गति परे प्रेम के फन्द॥३८॥
रतनन के भाजन विविध धरे सेज ढिग आनि।
मधु मेवा फल अमृत मे भरि भरि राखे वानि॥
सोधौ पान सुगन्ध वहु रचि रचि धरे वनाइ ।
सखियन कौ सुख कह कहौ तिहि रस रही समाइ॥
मंगल रैनि सुहाग को गावत सखी प्रवीन ।
प्रथम विलास अनग रस वाढ्यो रंग नवीन॥४२॥
लई लाडिली अङ्क भरि कहा कहौ आनन्द ।
मानो छवि को चन्द्रिका लीनौ गहि छवि चन्द॥
वढि गयो ऐसो प्रेमरस विदा लाल की कौन ।
चितवनि मुसकनि सहजकी वतियन माहिँ प्रवीन॥

कोक विलास कलानि मे दोउ प्रिय समतूल ।
कहा कहौं तिहि समै की बाढी जो उर फूल ॥
बरबिहार रसरंग मे नागरि परम उदार ।
सींचत पियहि पियारजल लालच लाल निहार॥
नवल रँगीली रँगभरी रँग भरि मोहनलाल ।
बढी दुहुनि के होय ते केलि की बेलि रसाल॥
बतवतात मुसकात दोउ अति छवि सो लपटाति।
गौर स्याम तन रहे मिलि अँग मे अँग भलकात॥
दसनाचल अञ्जन लग्यो पलक पीक रस सार ।
दियो बदलि अनुराग के अधरनि को सिंगार ॥
वार निहारनि की अरुझ तन मन की अरुझानि।
मानो हासि सिंगार दोउ मिले आपु में आनि ॥
निसि बीती सब रग में उठे भोर सुकुमार ।
सखी सबै अति सोहनी राजत सग अपार॥५१॥
सुरँग सुहानो तिलक पर सुरँग चूनरी पाग ।
बाहाजोरी फिरत दोउ भीने रँग अनुराग ॥५२॥
लै लै फूल सुरग पिय प्रियहि बनावत जात ।
अगनि उरजनि छुवन को अति आतुर ललचात॥

देखि विपिन जमुनापुलिन ढरे कुटी की ओर।
सोभा आवन चलन फिरन जो ध्रुव कहै सु थोर।
द्वै छ कहै पचास पर चारि विचारि निहारि।
राधा वल्लभलाल यश पलु पलु ध्रुव उर धारि।
बनविहारलीला कही जो सुनिहै करि प्रीति।
सहजहि ताकै उपजिहै वृन्दावनरस रीति ॥५६॥

इति श्रीबनविहारलीला सम्पूर्ण।



अथ रंगविहार लिख्यते ।

दोहा ।

राजत छवि सो रगमगे रगमगि सहज सिँगार ।
वैठि रगमगौ सेज पर रगमगि रूप अपार ॥ १ ॥
सखी एक दई आरसो ललित लाडिलो पानि ।
तिहिछिनपियकौमनपर्‍यौ है छवि के बिच आनि॥
बढ़ी अधिक सोभा झलक कुञ्जभवन रह्यौ छाइ।
मानो कोटिक रूप के चन्द उदै भये आइ ॥३॥
निरखि माधुरी सहज की नैन न मानत हारि ।
बढी लहा रुचि की लटो धीरज कूल विदारि ॥
प्रिय प्रवीन रस प्रेम मे चितवत भौंहनि भाइ ।
जिहँ छन जैसी होत रुचि जानत त्योहि लडाइ॥
छिन छिन औरै और छवि पल पल में गति और।
नागर सागर रूप के परमरसिक सिरमौर ॥ ६ ॥
कवहु लाडिलो होत पिय लाल प्रिया ह्वै जात ।
नहिँजानत यह प्रेमरस निसदिन कितहिविहात॥

सुरँग चूनरी एक में रँग भीने सुकुमार ।
लपटै ऐसी भांति सो नहिँ समात विच हार ॥

इन्द्र नीलमनि पिय प्रिया कोमल कुन्दन वेलि।
लसत छबीली भाति सो सुरत समर कल केलि॥
लाल मगन मुख सेज पर लटकत रही सँभारि।
रति नागरि अधरन-सुधा प्यावत वदन निहारि॥
नैन कटोरी रूप की भरी प्रेम मदमोद ।
अद्भुत रुचि पीवत बढ़ी आनँद रँग दुहुकोद ॥
अगनि की छवि माधुरी निरखतहूं न अघाहिं।
नैन भँवर भूले फिरै रूप कमल वन माहिं॥१३॥
ऐसो छिन ह्वैहै कबहुं कुंवरि अक भरि लेहिं ।
दसन खण्डि अति हित सो हँसि मुख बीरी देहिं॥
यहै सोच रहै चित्त में भूषन वसन बनाइ ।
पहिराऊँ अपने करनि रहैं रीझि सुख पाइ॥१४॥
यद्यपि पिय देखत रहे मन को सोच न जाइ ।
कैसहु एकहु वार ए देखि नैन अघाइ ॥ १५ ॥
अति आसक्त सनेहवस मोहनरूप निधान ।
तजि स्यानप राख्यौ न कछु अरपे तन मन प्रान॥
सौरभता सुकुमार की जब पावत सुकुमार ।
फैलि परत तनु प्रेमरस रहत न देह सँभार ॥

अतिहि विवस ह्वै जात पिय ऐसी भांति अनूप।
सुनि सखि तब ह्वै है कहा जबहि देखिहै रूप॥
अधरनि अंगनि परसिबौ तिनकौ यहै उपाय।
चितवनि अति अनुराग की लेत है पियहि लगाय॥
छिन छिन माहिँ अचेत ह्वै पल पल माहिँ सचेत।
नहिँ जानत या रंग मे गए कल्प जुग केत॥
एक लाडिलो लाल मे अद्भुत सरस सनेह।
रुचि तरग पल पल वढै वरषत रस को मेह॥
वरषत रस को मेह वढी सुख सरिता भारी।
मुसकनि मनु छवि कमल अँग फूलनि फुलवारी॥
हावभाव अकुर नये उपजत रग अनेक।
हित ध्रुव हित सो वात करि तनमन भे दोउ एक॥
अलक लडो सुख लाडिली अद्भुतरूपनिधान।
मोहि रहे मोहन निरखि भूलैं सवै सयान॥२२॥
तिनकि रूपहि कहन को कतिक वुद्धि है मोर।
रस गुन सींवा रूप की वँधे नैन की कोर॥२३॥
अति सुरग मोतिन सहित वनी माँग रुचि दैन।
मनो हास अनुराग मिलि राजत रसपति ऐन॥

फबि रहि गौर ललाट पर बेंदी की झलकानि।
मनि अनुराग सुहाग की मानो प्रगटी आनि॥
उज्जल स्याम सुरंग दृग सने सनेह सलोन।
बार बार परसत रहें चञ्चल श्रवननि कोन॥२६॥
कहि न सकत नासा बनक उन्नत सुमिल अनूप।
चितवत मोती की छबिहि भूल्यो रूपहि रूप॥
मधु में अधर सुरंग मृदु छवि सीमा सुकुमारि।
दसननि पकति जोति पर दामिनि अगनित वारि॥
उपमा सुन्दर चिबुक की सकत न उर मे आनि।
सोभा निधि अद्भुत मनो हरि मन हीरा-खानि॥
मुसकानि आनँदफूल मनु चितवनि सुख की सींव।
है लर मोतिन पोत छवि झलकि रही मृदुग्रीव॥
उरजनि की छवि कहँ कहाँ तैसो झलकनि हीय।
भूलत नहिँ मन के करनि धरे रहत हैं पीय॥
तन सो सारी मिलि रही सोधे सनी सुरङ्ग।
मानो सोभा छाइ रहि झलमलात अँग अङ्ग॥
रसभीनो झीनो बनी अँगिया गोरे गात।
अतिसुदेश गाढो कसनि लसत ललित उरजात॥

प्रीतम को चित मीन मनु पर्‌यो नाभि हृद माहिँ।
अति स्वादो सुख स्वादरस कैसेंहु निकसत नाहिँ॥
नखसिख लौं दोउ उरभ रहि नेकहु सुरभत नाहि।
ज्यों ज्यों रुचि बाढ़ै अधिक त्यों त्यों अति उरभाहि॥
जे हरि रीझे नूपुरनि निमिष न छाड़त पाइ ।
पायल सुख की रासि तहँ ते हरि रहे लुभाइ ॥
चरननि हित जावक लिये ललन रहे अति सोहि ।
चित्र कारत चितचित्र भो छबि चरित्र रहे जोहि ॥
चाहि रहे छावत चपनु बढ्यौ प्रेम की प्यार ।
रुचि प्रवाह मे पर्‌यो मन चूमत बारम्बार ॥३८॥
रसभरि चितवनि हेत की रँग भीनी मुसक्यानि।
जोवनि की सुख सहज फल यहै लेत पिय मानि॥
पुनि फिरि प्यारी प्यार सों रमकि लिये उर लाइ।
देखत सुख हिय दुख भयो नैननि जल भरि आइ॥
गहि कपोल सुन्दर करनि नैननि नैन मिलाइ।
अधरनि रस प्यावत पियहिँ लाज नेम बिसराइ॥
छुटी मूर्छा चेत भो चितवत मुख की ओर ।
रटत पपीहा तृषित जनु व्याकुल चकित चकोर॥

चरनकमल को निज महल तहाँ बसत मम प्रान।
इतनो नातो मानि कै देहु अधररस पान॥४३॥
हारी प्यारी देत रस पिय पीवत न अघात।
देखि लाड़िली लाल रुचि रीझि रीझि मुसकात॥
करुनानिधि मृदुचित्तअति उरजनि सों रहि लाइ।
लज्जित ह्वै रहि विवस तहँ मदनकोटि सिरनाइ॥

सोरठा।

पिय सों कहै जु बात, अलबेली अति फूल सों।
हँसि मृदु उर लपटात, पिय के जीवनि यहै सुख॥

दोहा।

प्रेम रासि दोउ रसिकवर, एक बैस रस एक।
निमिष न छूटत अग सँग यहै दुहुनि की टेक॥
अद्भुत गति सखि प्रीति की, कैसेहु कहत बनै न।
थोरेहु अन्तर निमष को, सहि न सकत पिय नैन॥
*स्याम रग स्यामा रँगी, स्यामा के रँगि स्याम।
एक प्रान तन मन सहज, कहिवे को द्वै नाम॥
सखियनि के नैना रँगे, नवल विहार सुरङ्ग।
माती नेह अनद-मद, दम्पति केलि अनङ्ग॥५०॥

प्रेम मदन रस नैन भरि हियौ भयौ आनन्द ।
सुरत रंग के रंग रँगि, विवि वृन्दावन चन्द ॥
रस समुद्र दोउ लाड़िले, नव नव भाव तरङ्ग ।
तामें मज्जन करत रहि, ध्रुव दिन मनहि अनङ्ग ॥
अद्भुत रंग विहार जस, जो सुनिहै चित लाइ ।
रसिक रँगीले विवि कुँवर तिहि उर झलकहि आइ॥
छप्पन दोहा कहे ध्रुव, रंग विहार अनङ्ग ।
या रस में जे रँगि रहे, तिनही सो करि सङ्ग ॥

इति श्रीरंगविहार सम्पूर्णम् ।



अथ रसविहार लिख्यते।

दोहा।

रूप नदी कारिया मदन नवल नेह की नाव ।
चढे फिरत दोउ लाडिले छिनछिन उपजत चाव॥
रसविहार कछु प्रगट कहुं सुनहु रसिक चितलाइ॥
नावनि चढि बनविहरिवौ यह उपजी उर आइ॥
कञ्चन की रतननि खची रची अनेक अनङ्ग ।
जमुना जल मैं झलकि रहि गुमटी नाना रङ्ग॥
मनि-मै छची सबनि पर रही अधिक झलकाइ।
कहु कहुं फूलनि की लता रहि गइ सहज सुभाइ॥
नाव बनाव जु कहन को ऐसी मति धरै कौन।
कुन्दनि के हीरनि खचे दुखने तिखने भौन॥५॥
लै लै कञ्ज गुलाव दल आसन सेज रचाइ ।
अम्बर अरगजा सों छिरकि राखी सखिनि बिछाइ॥
तापर रसिकनि रसिक दोउ नागर नवलकिशोर।
अवलोकत मुख माधुरी जैसे चन्द चकोर ॥७॥
ललितादिक निज सहचरी लेई राजत पास ।
आनँद के अनुराग रँगि लूटत सुख की रास॥८॥

और सनेहनि पर चढी लीने सौंध सिँगार ।
चन्दन वन्दन अगरसन और विविध उपहार॥६॥
एकनि पै पाननि हवा एकनि के कर चौर ।
रससुगन्ध भींजी सबै भ्रमत चहूंदिसि भौर ॥
जहँ तहँ जल मे झलमले, अगनि भूषन जोति ।
मानों वरषा रूप की कालिन्दी मे होति ॥११॥
भूलि रह्यो नहि कहि सकति मतिश्री गति भइ पंग।
कोटि भान ससि कमल मनु जुरे आइ इक संग॥
अति प्रवीन सब सहचरो रँगी राग के रङ्ग ।
कोउ बीना कोउ सारँगी कोउ लिये हुडक मृदङ्ग॥
एक लिये किन्नर सुरज एक तार बाठतार ।
सरस एक तें एक सखि गुन की अवधि अपार ॥
एक मधुर सुर गावही अद्भुत बाँकी तान ।
रीझि लाडिली लाल दोउ देत सबनि को पान॥
चलनि फिरनि छबि काहँ कहो नैना रहे लुभाइ ।
मानो रूप छटानि के लइ रविजा सब छाइ ॥
सुरँग सुगन्ध गुलाल अति सखियनि दियौ उड़ाइ।
अम्बर मनु अनुराग को तिहि छिन लियो उठाइ॥

कुसमनि के गेंदुक लिये खेलत दोउ सुकुमार।
आलिगन चुम्बन चपल छुवत उरज उर हार।
हावभावचितवनिचपल विभ्रविचिमृदुमुसकानि।
अतिविचित्रघटिनादिकोऊकोककलनिकीखानि।
जबहि कुँवर नीवो गहत भौंह भङ्ग ह्वै जात।
वेपथु वात न कहि सकत पट्कमलनि लपटात।
दीखि दीन आतुर पियहि ह्वै क्रपाल रस ऐन।
अधर सुधा प्यावत पियहि जुरे नैन सों नैन।
रसबिहार के सुनतही उपजै जिनकी रंग ।
हित ध्रुव तौ जॉचत यहै तिनिहीं सों होइ संग॥

इति श्रीरसविहार सम्पूर्णम्।



अथ आनन्ददसाबिनोद।

दोहा।

प्रथमहि श्रीगुरु कृपा तें नित्य विहार सु रङ्ग ।
वरनौ कछु इक यथामति दम्पति केलि अनङ्ग॥
तीनि रङ्ग की नायिका वरनी कोककलानि ।
प्रिया चरन उर मे धरैं ठाढी जोरैं पानि ॥ २ ॥
नौढा मध्या अति चतुर प्रौढा परम प्रवीन ।
कुँवरि चरनि नख चन्द्र-कानि सेवत ज्यौ जलमीन॥
एकहि वहि क्रम नाहि कछु सहज अलौकिक रीति।
विलसतविविधिविनोदरति उपजावतनिजप्रीत॥
अपनी अपनो समै सव रुचि लै करि अनुसार।
फिरत रहैं छिन छिन नई आनँददशा विहार ॥
कहा कहौ छवि माधुरी छिन छिन चाह नवीन।
अद्भुत सुख मे मधुर मृदु प्रेम मदन रस लीन ॥
पल पल औरै और विधि उपजत नव नव रग।
सब अगनि कौ देत सुख यह कौतुक विन अग॥
प्रेमसिन्धु उमडे रहैं कबहूँ घटत जु नाहिँ ।
तिहँ सुख को सुख कह कहो जो उपजत दुहुमाहिँ॥

प्रथमहिँ नौधा की दसा रुचि लै प्रगटी आइ।
नखसिख अम्बर लाल को मानो लिये उठाइ।
नमित ग्रीव छवि सींव रस अंग छुवन नहिँ देत।
आतुर पिय अनुराग बस मृदु भुज भरिभरि लेत।
चाहत उरजनि छुयो जब उठत नवल कर काँप।
समुझि लाड़िली जोरिकर करकमलनि रहै ढाँपि।
परम चतुर चञ्चल सहज चञ्चलमै दोउ नैन।
रोम रोम पिय के बस्यौ निरखि प्रेमरस मैन॥
भये अधीर अधीन अति कहि न सकत कछु बात।
फिरिफिरि पायनि मे परत मृदुमुख हाहा खात॥
यह गति देखत पीय की चितई कछु मुसकाइ।
करुना करि चूमत मुखहि अधरसुधारस प्याइ॥
लटकि लाल उर सों लगी उपजी अगनित भाइ।
वचन रचन मुख कह कहो प्रीतम रहे लुभाइ॥
हावभाव मे अतिचतुर रतिविलास रसरासि।
चञ्चल नैनन चितवनी करत मन्द मृदु हासि॥
लिये लाल अति प्यार सो उरजनि बिच भुजमूल।
रुचिप्रवाह मे परे दोउ तजि कै लाज दुकूल॥

प्रेममदन रसरग धरि भरे रहत विवि हीय ।
लपटे ऐसी भांति सो है तन मन इक कीय ॥
अंग अंग मन मन मिले प्रेममदन रससार ।
ऐसे रङ्गविहार पर ध्रुव कीनों बलिहार ॥ १९ ॥
विवस लाल सुख रग मे रही न देह सँभार ।
प्रगट भई प्रौढा दशा जाकि प्रेम अपार ॥ २० ॥
लिये अङ्क भरि प्यार सो उरजनि सो रहि लाइ।
सावधान कीनें तबै नासा पुट चटकाइ ॥ २१ ॥
परिरम्भन चुम्बन अधिक आलिङ्गन बहु रीति ।
रतिविपरितविलसतविविध लिये मीत रस जीति॥
बङ्क कटाछनि हरति मन विच२ मृदुमुसकानि ।
पियकेउरपरलसतमनु छवि दामिनि भालकानि॥
श्रमजलकन मुख गौर पर अम्बन लसत सुदेस ।
कहा कहो छवि सहज की छुटे सगबगे केस ॥
पीक कपोलनि फबि रही कहुं कहुं अजन लीक ।
मनु अनुराग सिंगार के चित्र रचे रति नीक ॥
जेती कोककला कहो अद्भुत प्रेम अनङ्ग ।
छिनछिन औरै और विधि उपजत अङ्गनि अङ्ग ॥

प्रेम चाह रससिन्धु मे मगन रहत दिन रैन ।
उर सो उर अधरनि अधर जुरे नैन सो नैन ।
रससमुद्र गहरे परे तृपित होत तउ नाहिँ ।
नैन मीन ललितादिकनि तरत फिरत तिहँ माहि।
न्यारोन्यारी दसा कहि एक स्वाद हित जानि ।
जैसें एकहि बात के कीजे बिजन बानि ॥ २८।
रतिविलासरस सौंचिकरि स्मर विनोद बहु भांति।
आतुरता पियहगन की निरखि कुवरि मुसकाति।
निरखिनिरखि ऐसे सुखहि सखी सबै बलि जाति।
उनहू तें फूली अधिक आनँद उर न समाति ॥
सहजहि सील सुभाव मृदु रहि प्रसन्न सब काल।
एक लाल सुख-स्वादहित करि विलास नव बाल॥
प्यारी भौहनि चितै रहि परमरसिक सिरमौर ।
चलत भावतो रुचि लिये रुचत नहिन कछु और॥
रुचि रुचि रस के रचे रुचि मानों प्यारी पीय ।
सहज प्रेम के रँग रँगे द्वै तन मन इक जीय ॥
दीवे को राख्यो न कछु अति उदार सुकुमार ।
अधरसुधा प्यावत पियहिँ मुख-छवि रही निहारि॥

अति प्रवीन सब अग मे जानत बहुत लडाइ ।
सुखसमुद्र मे लाडिली लिये लाल अन्हवाइ ॥
रुचिफुलवारी फुल रही प्रीतम की उर ऐन ।
सींचत प्यारी प्यारजल चितवनि मुसकनि सैन॥
अलक लडी पिय पै लटकि प्यारहि सो भुज डारि।
याते चित्र से ह्वै रहे जिन भुज लेइ उतारि ॥३८॥
अग अग छवि माधुरी निरखत पिय न अघाइ ।
देखि लाल के लालचहि लालचहू ललचाइ ॥
कहा कहों या प्रेम कौ पिय के गति नहिँ आन।
एक लाडिलो सगहो जिनके जीवनप्रान ॥४०॥

कवित्त ।

अलबेली सुकुमारी नैनन के आगे रहै तब लगि प्रीतम की प्रान रहै तन मैं । यह जिय जानि प्यारी पलहू न होत न्यारी तिनहीं के प्रेम रग रँगि रही बन मैं ॥ परमप्रवीन गोरी हाव-भाव मे किशोरी नये नये छवि के तरङ्ग उठै छन मैं । हित ध्रुव प्रीतम के नैन मीन रस लीन खेलियौ करत दिनप्रति रूप बन मैं ॥ ४१ ॥

दोहा।

स्थूल मदनरस कछु कह्यो अब सुनि सूछम रङ्ग।
जहा विराजत एक रस अद्भुत प्रेम अनङ्ग॥४२॥
भीने दोउ आसक्त रस तन मन रहि अरुझाइ।
एक प्यारही दुहुन मे रह्यो सहजहीं छाइ॥४३॥

कवित्त।

प्यारही की कुञ्ज अरु प्यारही की सेज रचौ प्यारही सो प्यारेलाल प्यारी बात करहीं। प्यारही की चितवनि मुसकनि प्यारही को प्यारही सो प्यारोजी की प्यारी अङ्क भरहीं॥ प्यार सौं लटकि रहै प्यारही सो मुख चहै प्यारही सौं प्यारी प्रिया अङ्क भुज धरहीं। हित ध्रुव प्यार भरी प्यारी सखी देखि खरी प्यारे प्यार रह्यो छाइ प्यार रस ढरहीं॥ ४४॥

दोहा।

चितवनि मुसकनि सो रँगे प्रेमरग रससार।
छके रहत मदमत्तगति आनँद नेह सिंगार॥४५॥
दरसन परसन उरज उर छुवनि कुचनि भुजमूल।
पहरे पट दोउ प्रेम के बिसरे नेम दुकूल॥४६॥

बूड्यौ मन रस प्रेम भरि धीरज धरि सकि नाहिं।
नैन कमल हरुके हुते तिरत रूप जलमाहिं ॥
फूल सुरँग अनुराग के उर उर मे रहे फूल ।
मनो भँवर मन दुहुन के छवि सुगन्ध रहे भूल ॥
जीवनि मुसकनि चितइवी अधरसुधा सुखस्वाद।
लेत मधुप पिय मन मनों कोमल कमल सुवाद॥
पहरे दोउ अति फूल सो फूल विलासन हार ।
कौलिहु तईं भारी लगत ऐसे दोउ सुकुमार॥५०॥

कवित्त।

माधुरी की कुञ्ज ताके मोद की लै सेज रची तिहि पर राजै अलबेलि सुकुमार री। रूप तेज मोद के जुगल तन जगमगे हावभाव चातुरी के भूषन सुढार री। नेह नीर नैनन को सैनन में रहे भीजि कौन रस वाढ्यौ जहा बोलिबोउ भार री। अतिही असक्ति सखी रहो मोहि जोहि जोहि हित ध्रुव प्रानिनि को इहई अधार री॥

दोहा।

रसही की मूरति दोऊ रसिक लाड़िली लाल।
रसही सो चितवत रहे रसभरि नैन विसाल ॥

पिय परसत भुज मूल कुच और उरन हिय हार।
बूडि जात मन रूप सर रहत न देह सँभार ।
प्रेम नेम की दसा जिति उपजत आनहि आन।
रसनिधान विलसत रहैं सुख को नहीं प्रमान।
और न कछू सुहाइ मन यह जाँचत निसि भोर।
या सुख घन सो लगि रहै ध्रुव लोइन दिन मोर।
यह सुख निरखत सखिन को आनँद बढ्यौ न थोर।
हेमलता फूली मनो झूमि रही चहुँओर ॥५६॥
छप्पन दोहा कहे ध्रुव आनँददसाविनोद ।
रूपमाधुरी रँग रँगे परे प्रेमरसमोद ॥ ५७ ॥

इति श्रीआनंददशाविनोद सम्पूर्णम् ।



अथ रंगविनोद ।

दोहा ।

प्रथमहिँ चितवनि लाज की दुतिय मधुरमृदु बैन ।
तृतिय परस अगनि सरस उरजनि छवि सुखदैन ॥
परिरम्भन चुम्बन चतुर पञ्चम भाइनि रङ्ग ।
षटरस विंजन स्वाद जिमि उठत अनङ्ग तरङ्ग ॥
विविधिभांति रतिकेलि कल सप्त समुद्र अपार ।
वचन रचन अष्टम नवम रसनिधि रंगविहार ॥
क्रम सों कहि भुव नवों रस मिटत न कबहुँ हुलास ।
ऐसो लाड़िलो लाल को अद्भुत प्रेम विलास ॥
अब बरनों ज्योनार कछु रस में रस सिंगार ।
प्रीति रसोई अति बनी प्रीतम जेवनहार ॥ ५ ॥
विविधि भांति विंजन सरस भये जु बहुत प्रकार ।
मानो पानिप अंग दुति मौवत बारम्बार ॥ ६ ॥
अधरसुधा मादिक मधुर पुट कपूर की हांसि ।
बोचि सलोनो चितवनी बाढ़त रुचि सुख रासि ॥
कुञ्ज सदन आनन्द रस दिखिबो आनँद रूप ।
हावभाव रसमाधुरी विंजन बने अनूप ॥ ८ ॥

चाह छुधा रसना नयन प्यास तृपा नहि थोर।
परसति रति अतिहित सों छवि खात हिँ नहि बोर॥
आलिङ्गनवर कलपतरु सुरत रंग सुख मूल ।
इक रस फूल्यो रहत दिन चितवनि मुसकनि फूल॥
अतिसुगन्ध वचनावली बीरी सुख अनुराग ।
पौढे सहज प्रयङ्क पर ओढे चीर सुहाग ॥ १० ॥
वृन्दावन है प्रेम के फूले फूल अनूप ।
लोइन अलि ललितादिकनि पीवत सौरभ रूप॥
परम रसिक नागरि नवल राधावल्लभलाल ।
मुसकनि मन हरि लेत हैं चितवनि नैनविसाल॥
नव किशोर चितचोर दोउ अलबेले सुकुमार ।
भीने रंग सुरंग मे रचि रहे प्रेमविहार ॥ १२ ॥
दुलहनि दूलहु रसमसे प्रेम रूप की रासि ।
नवल रँगीली सेज पर करत हँसि पर हाँसि ॥
अतिहि छबीले कुँवर दोउ करत रसीली बात।
मरमभेद कहि कहि कछू हँसि हँसि उर लपटात॥
कजरारे चञ्चल नयन छवि की उठत झकोर ।
को समुझै घन मेघ सुख बिना रसिक-सिरमौर॥

रदन चिन्ह रति के सुरँग सोभित सुभग कपोल।
मनहु कमल के दलनि पर झलकात रतन अमोल॥
सुर तरग पर सुख नहीं बातनि ऊपर बात ।
अधर पान पर रस नहीं परसन पर उरजात॥
लटकनि लटकनि रग को चितवनि हँसि विनोद।
यह सुख को समुझै सखी जो उपजत दुहुँ कोद॥
कोमल फूली लतनि मे करत केलि रस माहि।
तहँ तहँ को बल्ली सबै सकुच विवस ह्वै जाहि॥
वृन्दावन की लता द्रुम कुञ्ज सबै चिद्रूप ।
झनक झनक विहरत तहाँ दम्पति सहज स्वरूप॥
सौरभ अंगनि कह कहौं स्वास सुवास अनूप ।
रोम रोम आनन्द निधि लखिवौ पानिप रूप॥
फूलनि मे दोउ फूल से सौरभ रूप सुरंग ।
ललितादिक पाछे फिरत भौनो तिनके रग॥
धन्य धन्य सखियनि सुकृत देखत ऐसी भाँति।
जवहिँ लाडिली लाल-तन प्यार सहित मुसकात॥
जव देखो रस रँग ढरी वाढ्यो आनन्द होय ।
रचि बनाइ मृदु अँगुरियनि बीरी खावत पोय॥

विचिहि लाल चाहत कुयौ कुच कच अरु भुज मूल।
अति प्रवीन मन मे समुझि ढाँपति नील दुकूल॥
आतुर पिय अनुराग वस कहि न सकत कछु बात।
फिरि फिरि पाइनि मे परत मृदु सुख हाहाखात।
अति सनेह के रँग भरी रहि न सकी अकुलाइ।
लये लाल उरजनि तबहिँ अधर सुधारस प्याइ।
कहा कहौं या प्रेम की बात कही नहिँ जाइ।
प्यारी मानो पियहि लै रखे प्यार सौ छाइ॥
कुसल कोक की कलनि मे उपजत अनि नित माइ।
किय अधीन जलमीन ज्यौं सुरत के रसहिँ चहाइ।
देखि प्रिया को प्रेम पिय सुख तन रहे निहारि।
नैन सजल अति विवस ह्वै रहे प्रान वपु हारि॥
वृन्दावन मे सिन्धु है उमडे रहै अपार।
प्रेम मदन रस सौं भरे रग तरग सिँगार॥२१॥
मध्य पुलिन सज्या बनी सुन्दर सुभग सुढार।
विलसत स्यामा स्याम तहँ सोभानिधि सुकुमार॥
प्रेम नेम रति-रग सुख दिनहिं परस्पर होत।
पलु पलु नव नव रमि फिरैं सहजहि ओतप्रोत।

मदन लहरि के उठतहीं बाढ़त सुरत विहार
प्रेम लहरि मे परतहीं रहत न देह सँभार ॥३४
अद्भुत जुगलकिशोर छवि छिन छिन औरै और ।
प्रेममगन विलसत दोऊ रसिकनि-मनि सिरमौर ।
रगम सगम सागरनि बाढ़त रुचि को तोड़ ।
या रस मे ललितादिकनि राखे नैन समोइ॥३७
सखियनि को सुख कह कहों मेरी मति इति नाहि ।
यह रस उनको कृपा तें जो रहै ध्रुव मन माहि ॥
भाग पाइ ठहराइ जो यह रस पारी प्रेम ।
ताके हिय झलकत रहै गौर नील मनि हेम ॥
मेरी तौ मति कौन है यह रस परसौ जाइ ।
एक लाड़िलो लाल को सकतहिँ लेत बनाइ ॥
दोहा रगविनोद की रचि कीने चालीस ।
सुनै गुनै हित सहित ध्रुव तिहि पदरज धरु सीस ॥

इति श्रीरङ्गविनोद सम्पूर्णम् ।

अथ नृत्यविलास ।

चौपाई ।

एक समै नागरि नवनागर। प्रेम रूप गुन कै दोउ सागर ॥ हिलि मिलि प्रेमरंग रस चहहीं। परम प्रवीन सखी सँग रहहीं ॥ मण्डल जोरि चहूदिसि ठाढी । प्रेम चितेरे चित्र सी काढीं ॥ राजत भानुसरोवर तीरा । आवत परसि सुगन्ध समीरा ॥ सारस हंस चकोर चकोरी । नित्तत फिरत बरह सँग मोरी ॥ देखि मुदित भई न वलकिशोरी । आनँद मे झलकत मुख गोरी ॥ उपजी बात एक मनमाहीं । सकुचत हैं पिय कहि न सकाहीं ॥ कबहू नुपुर धाइ बनावैं। याही मिस चरननि कूं आवैं ॥ कबहू सुन्दर बीन ब जावैं । नवल प्रिया मन रुचि उपजावैं ॥ निर खत सुख कहि सकत न प्यारी। हेत लाल कौ प्रिया विचारी ॥ परम प्रवीन मुकटमनि प्यारी निर्त्त कला गुनको विस्तारी॥ तिरप बाँधि कम लनि पर चली । निरखत थकित रही है अली

अद्भुत कमल मध्य सर माहीं। ताके सिर पर नृत्य कराहीं ॥ १३ ॥ दोहा।

नित्तविलासहिं देखि सखि रही सोचि विसमाइ।
नित्त जु भूरतिवन्तहो ठाढी लेति बलाइ ॥१४॥

चौपाई।

हुरक रबाब गजर बहु बाजै । सखियनि प्रति आनन्द सों साजैं ॥ किन्नर मुरज मृदङ्ग बजावैं । घत में घत नव नव उपजावैं ॥ अति सुकुवारि नित्त रँग भीनी। भाइ भेद गति लेति नवीनी ॥ जो गति सुनी न देखी कबहीं । नूतन प्रगट करी ते अबहीं ॥ अलग लाग हुरमई जु लीनी । प्रगट कला निज गुन की कीनी ॥ परत जु आइ मान जिहि दल पर। वैसेइ रहत चरन के तरहर ॥ लाघवता सी पग रहै ऐसे । परसन हात दूसरे जैसे ॥ सुलप अनूप चारु चल ग्रीवा। सहज सुगन्ध विलास की सीवा ॥ थेई थेई कहत मोहनी बानी । सखियनि नैन चले ह्वै पानी ॥ मुसकनि मधुर चित्त को हरहीं । चितवनि मानि दूसरी परही ॥ २४ ॥

दोहा।

निर्त्त सुढग कला जिती कही प्रगट परमान।
कुई न तिनि मे एकही उपजी आनहि आन।

चौपाई।

पुनि केसरि परि लसति रँगीली। झलकति बेसरि परम छवीली॥ कछुक अलाप मधुर कल कीनो। मति बुधि सबहिनि की हरि लीनो। कबहुँ न सुनो राग-धुनि ऐसी। कीनी सबहि कुँवरि सखि जैसी॥ राग रागिनी जूथ लजाए। खोज रहे ते स्वर नहि पाए॥ भृङ्गी भृङ्ग सुनत म्ह्दुबानो। थक्यौ पवन अरु चलत तपानी॥ स्रवत द्रुमनि ते रस की धारा। आनँद प्रेम कियौ विस्तारा॥ रंग-पुञ्ज बरषत बरिया सी। हित ध्रुव गुनसींवा गुणरासी॥ २२॥

दोहा।

सुनत राग अनुराग धुनि मोहे नागर लाल।
सकी न धीरज धरि सखी मरम लग्यो सरवाल॥

कुण्डलिया।

लाल विवस सहचरि सबै मोरी मृगी विहङ्ग।
गावति रस मे नागरी नव नव तान तरङ्ग॥

नव नव तान तरग सप्त-सुर सौं मन हरिहीं ।
ऐसी को सखि आहि सुनत उर धीरज धरिहीं ॥
नव नव गुन की सींव सब अति प्रवीन बर-बाल ।
नागर कुल-मनि तैसेई श्रोता सुन्दरलाल ॥३४॥

चौपाई ।

अति विह्वल ह्वै गए बिहारी। भूषन पट सुधि देह बिसारी ॥ रही सँभारि सखी हितकारी । नैननि होत प्रेम बरिषा री ॥ प्रिया प्रिया रव मुख ते निसरे । नाम रूप गुन कबहुँ न बिसरे ॥ यह गति देखि लाल की प्यारी । नेह रगमगी अति सुकुवारी ॥ महा प्रेम समझत उर घूमी। तिहि छिन आइ लाल पर झूमी ॥ देखत बिबस भुजनि भरि लीने । चितै बदन नैना भरि दीने ॥ महा प्रेम सौं उर लपटानी । तिनकी प्रीति न जाति बखानी ॥ भरि अनुराग लाल उर लायौ। अधर सुधा जीवनि रस प्यायौ ॥ खुलि गए नैन प्रान घट आए। प्रिया प्रेम झकझोरि जगाए॥ ललित लाल डोलत सँग लागे। प्रिया-प्रेम नखसिख लौ पागे ॥ ४४ ॥

दोहा।

नखसिख लौं सखि पगि रहे प्रीतम प्रेम तरङ्ग।
तिहीं भाँति पुनि लाडिली रँगी लाल के रङ्ग।

कुण्डलिया।

नागरि नृत्य विलासरस जो अवगाहत नित।
हित ध्रुव अद्भुत प्रेम सौं रहै सरस दिन चित्त।
रहै सरस दिन चित्त और काहु सुन्यौ न भावै।
बिन बिहाररस-प्रेम और उर मे नहि आवै।
अत सुखहिँ को सींव सकल अगनि गुन आगरि।
प्रीतम मन हरि लेत सहज रस मैं नवनागरि।

इति श्रीनृत्यविलासमम्पूर्णम्।



अथ रङ्ग-हुलास।

दोहा

सखी सबै सेवा करैं जिनके प्रेम अपार।
जैसी रुचि है दुहुँनि की तैसो करत सिँगार ॥
सौरभ सों तन उमडि के मज्जन किय सुकुवारि।
अगनिकोछबिकहककहोमतिरहिसुरतिबिसारि ॥
सुख तमोल को अरुनई झलकनि सहज सुहाग।
मनो कमल के मद्धि तें प्रगट भयो अनुराग ॥
रचो सचिक्कन चन्द्रिका छबि रहि माग सुरंग।
मनु अनुराग सिँगार का सोवा रची अनग ॥
वेंदी नथ अरु तिलक पर सुरँग चूनरो सोहि।
निरखत है धीरज धरैं तऊ रही सखि मोहि ॥
चिलकनिकचचमकनिदसनचितवनिमुसकनिफूल
झरत रहै पिय लाल पर सुखनिधि आनँद मूल ॥
कजरारे उज्जल सुरँग अनियारे दोउ नैन।
उपमा और कहा कहों मोहन मन हरि-लैन ॥
अधरनि की छबि काह कहौ रसमय मधुर सुरग।
सींचत पिय हिय लोइननि पानिप वारि-तरग ॥

अति सुन्दर वर चिबुक पर साँवल विन्दु सलौन।
मनहु स्याम मन अलप ह्वै वैठ्यौ तहँ धरि मौन।
कैसे के बरनौं सखी सहजहि भाँति अनूप।
चलैं ढरकि मन मैन ज्यौं लागत छवि रवि धूप।
पानिप झलक कपोल पर कुटि रह्यो अलक रसाल।
वेसरि की मुक्ता चपल चञ्चल नैन विसाल॥११॥
विविधि भाँति भूषन बसन प्रतिबिम्बित अँग अंग।
रूपनि मनिगन मे मनो झलकनि उठत तरंग।
झलकनि झमकनि कछु कही सोभा बढी सुभाइ।
मानहु कोटिक दामिनी छवि सौं चमको आइ।
मेहँदी परम सुरंग सो रचे चरन मृदु पानि।
मनु रैनी अनुराग की रँगी कमल दल पानि।
नैनानि अञ्जनि देति सखि काँपति कर अरु हीय।
अति विसाल चञ्चल चितै विवस होत है पीय।
अति प्रवीन सब अंग मे रूप सींव सुकुवाँरि।
बाढत है छवि अधिक तव लालहि लेति सँभारि।
प्रेम प्रिया की कह कही राखें छबि सौ छाइ।
पिय के सर्वसु लाडिली रहे बिनु मोल बिकाइ॥

उरननि छवि हारावली,लालनि रहे निहारि ।
तृपित न कबहूँ भये हैं पिवत प्रेमरस वारि ॥
नखसिख मोहनी सोहनी वारी रति श्री कोटि ।
जदपि पिय मोहनहु ते रहे चरन तर लोटि ॥
सखियनि मण्डल में खरी तेसिय झलक सिँगार ।
मनु सेवत छवि चन्द को रूप के कमल अपार ॥
अब सुनि प्यारे लाल को रुचि को रच्यौ सिँगार ।
बेसरि मारी कछुकी बेनी गुही सुढार ॥ २१ ॥
बेंदी दई अति प्यार सों हँसि लाडिलि सुकुवारि ।
वाढी ऐसी फूल उर सकत न लाल सँभारि॥२२॥
कुन्दन कि रतननि खचे बने तरौना कान ।
मानों छवि की कमल ढिग झलकत छवि की भान ॥
जहँ लगि भूषन कुँवरि के पहरे तेई बनाइ ।
कौन भाँति अति लाज सों चितई मुरि मुसकाइ॥
वेष प्रिया को करतहीं पायिप बढ़ो अनूप ।
मनु सब के मनहरन को प्रगटो मूरति रूप ॥२५॥
नवल सखी छवि नई नई अग अग झलकन्त ।
मनों सुहाग अनुराग की सींव सुरँग श्रीसन्त ॥

अति विसाल चञ्चल दृगनि अञ्जन दियौ बनाइ।
रेख मेख कारनि बनी चित्तहिँ लेत चुराइ॥२८॥
नासा बेसरि फबि रही थिरकनि मुक्ता सङ्ग ।
मनहुँ खिलावत विधु बुधहिँ हित सों लिये उछङ्ग॥
बनी सहेली साँवरी सोभ रही मन छाइ ।
उपमा और कहा कहौ लाडिली रही लुभाइ॥
चितवनि अति अनुराग की रँग-भीनी मुसकानि।
देखि छबीली छबिहि छबि पाइनि मे परि आनि॥
मोहन तें बनि मोहनी लई सखी सब मोहि ।
अति सुठौन बानिक बनिक रही कुवरि मुख जोहि॥
बीन कुवरि कौ लयौ कर बजई बाँकी तान ।
अति प्रवीन लीनी रिझै गाइ सुरनि बधान ॥
रीझि लाडिली अङ्क भरि लीनी उर सों लाइ।
है सरिता छबि की मनो मिली आपु में आइ॥
बाढी रुचि या वेष पर उपज्यौ नूतन चाव ।
मिटी न मन की चपलता भूले और सुभाव॥३४॥
पियहि प्रिया कौ भेष रुचै प्यारी को पिय वेष।
हिय तें हिय छूटै नही परि गई प्रेम की रेख॥

ठाढी जुवति जूथ मे छवि की उठत झकोर ।
मानहुं चन्दहिं घेरि रहे सब के नैन चकोर॥३६॥
करि सिंगार सहचरि सबे रूपहिं रहीं निहारि।
बैठे कुञ्ज सिंगार मे सेज सिंगार सँवारि ॥ ३७ ॥
राजत नवल निकुञ्ज में नवकिशोर चितचोर ।
सखी सहेली रस भरी झमकि रही चहुंओर ॥
प्रेम मदन-रस की सदन रदन अधर धरि पीय।
रस समुद्र मे परे दोउ जुरे नैन अरु हीय ॥३८॥
लटकनि ललित सुहावनी सो तो बसि रही हीय।
धव लावत उर प्यार सो हँसि हँसि प्यारी पीय ॥
कजरारे सुठि सो हने उज्जल स्याम सुरङ्ग ।
नैननि छवि पर वारि सत खञ्जन कञ्ज सुरङ्ग ॥
जिहिरचितवनिचितहर्योतिहिचितवनिकीआस।
रसिकलाल छाडत नहीं निमिष लाडिली पास॥
कुंवरि चाल सखि देखि के कुवरहिं भूली चाल।
रहि गए ठाढे चित्र से चितवत नैन विसाल ॥
जौ फिरि चितवे लाडिलो ठाढे जमुनाकूल ।
फिरि आई अति प्यार सौ लीने गहि भुज मूल ॥

अद्भुत जोरी रूपनिधि नवल लाडिलो लाल ।
ऐसे रहौ ध्रुव हीय मे जैसे कण्ठ की माल॥४५॥
जोरी गोरी स्याम की सोभानिधि सुकुवार ।
अटके दोऊ आपु में उमडी प्रेम की धार॥४६॥
तिहि धारा की बूंद इक कैसे परसो जाइ ।
और जतन कछु नाहि ध्रुव रसिकनि संग उपाइ॥
मदन मोद मदरस मगन रहत मुदित मनमाहि ।
दरसत परसत उरज उर लपटतहूं न अघाहि॥
कुंवरि कटाछनि की छटा मनु अनियारे बान ।
पिय हिय में ध्रुव लगत रहै सोई ह्वै गये प्रान॥
प्रीतम के जीवनि यहै नैन कटाछनि पात ।
त्यों त्यों पिय की सीस सखि चरननि तर ढुरिजात॥
ऐसे रस में परै मन जनम सुफल ध्रुव होइ ।
नैन-सैन मुसकानि रतन हिय गुन सौ लै पोइ॥
लाडिलो लाल के प्रेम की जिनके रहै विचारि।
सुनि ध्रुव तिनको चरन रज बन्दन करि सिर धारि

इति श्रोरङ्गहुलास सम्पूर्णम् ।

अथ मानरसलीला।

दोहा।

रची कुञ्ज मनि में सुघर भलकत परम रसाल।
राजत हैं दोउ रंगमगे ह्वैगयो विचि इक ख्याल॥
देखि प्रिया प्रतिविम्बछवि चकि तकि रही लुभाइ।
तिहिं छिन वैठी लाडिली मान कुञ्ज मे जाइ॥
रहे सोच विस्माइ तब तन की गति भई आन।
लेई साँस दीरघ वचन कहत कहाँ प्रिय प्रान॥
कौन चूक मोते परी गई कहा दुख पाइ।
हे सखि मैं समझी नहीं इतनी सुधि ले आइ॥
वारवार सोचत यहे मैं तो कह्यो कछु नाहिं।
मन-देनी के समुझि तू काह आई उर माहिं॥
कहा कहौं अंब प्रान ये नैननि मे रहे आइ।
जो गति देखे जाति है तैसो जाइ सुनाइ॥६॥

सोरठा।

को समुझै यह बात, कहा कहो हियं चटपटी।
प्रान चले यह जात, रहि न सकत हैं प्रिया विन॥

दोहा।

सुनत वचन पिय के सखी भरि आये हग नीर।
रहिबे को व्याकुल भई चली पिया के तीर॥८॥
आवत देखी जब सखी मुरि बैठी सुकुवारि।
भौंह कखाई मौन धरि नीची रही निहारि॥९॥
मान कुञ्ज अद्भुत बनी मानिनी मान अनूप।
रस मे कछु रिस नैन भरि बाढ़ी सतगुन रूप॥
चतुरि सखी परि चरन मैं रुचि ले करति है बात।
देखें पिय की गति प्रिये हीयो दरक्यौ जात॥११॥
लुठति धरनि अँसुवा भरति वाढी नदी अपार।
गहि रहे गुन इक नेह को राधा नाम अधार॥
मुकट कहू वसी कहू भूषन कहुं पटपीत।
मैन सैन लिये घेरि के तातें भये अति भीत॥१३॥
सेज कुञ्ज भूषन वसन अरु फूलनि को हार।
देखि सबै अनखात है पावक जैसी झार॥१४॥
चन्दन चन्द समीर बन कुञ्ज मयूर समेत।
सब दिन तो यह सुखद है तुम बिन अब दुख देत॥
नेह रीति समुझति सबै तुम तें कौन प्रवीन।
जल ते न्यारी होइ जो कैसे जीवै मीन॥१६॥

तुव मग जोवत छिनहि छिन और न कछू सुहात।
पच पवन खरकत जबहि उठि धावत अकुलात॥
जहँ लगि तुव मग लाड़िली राखि नैन बिछाइ ।
ऐसे नेह नवल पिया लीजे कण्ठ लगाइ॥ १८॥
राधा राधा रट लगी धरि राधा इक ध्यान ।
तदाकार तुव रूप भे अब जिनि करहु निदान॥

अरिल।

कहत हिये की बात सुनहु जो कान दै।
बढ्यो सरस अनुराग प्रान पिय दान दै॥
एती समुझि कै बात विलम्ब न कीजियै।
पुनि हँसि २ कै प्यारी लाल भुजनि भरि लीजियै॥

दोहा।

जब जान्यौ कछु मन भयौ चतुर-चित्त को पाइ।
ल्यावन प्यारे लाल की तिहि छिन आई धाइ॥
सुनहु लाल नववाल वलि वैठी अति हठ ठानि।
मौन धरें नैना भरे टे कपोल पर पानि॥
पाइनि परि ट्टन दन्त धरि कीने जतन अनेक।
लाल तिहारी लाड़िली छाड़त नहि हठ टेक॥

बहुत जतन विनती करी बातें बहुत बनाइ ।
चलिये अब पिय प्रिया को लीजे वेगि मनाइ॥
मन तौ कछु कोमल भयौ बातें लगी सुहान ।
मान छूटि है जातहीं यह पायौ उनमान ॥२५॥
आइ लाल ठाढे भये आगे द्वौउ कर जोरि ।
सुनिसुनि प्यारे वचनमृदु रही कुवरि मुख मोरि॥
सुहृद भलो अति हेत सो बाएँ करत निहोरि ।
रसिक लाल बलि प्रेम सो बँधे तिहारी डोरि ॥
कै तब स्याम-सनेह मे समुझावति सखि तोहि।
अन्तर हित बाहिर सुरङ्ग हिय की नैननि जोहि॥
जाकि उर कछु प्रीति है कहत न अधिक बनाइ।
जैसी लहरि समुद्र की फिरि फिरि तहाँ समाइ॥
रतिलम्पट रस हेत हित अति अधीन ह्वै जाइ।
मधुर वचन सब कपट के कहत बनाइ बनाइ॥
अब तौ कीनो नेम यह चलौं न तिनि की गैन।
कैसी हँसिबौ वं [illegible]वौ सनमुख करौ न नैन॥३१॥

श्रीलालजी—दोहा ।

तुम प्रवीन सब अग मे ऐसौ चित न विचारि।
तासो इतनौ चाहिय तन मन जौ रह्यो हारि॥

कैसे के सहि जात है नेक रुखाई भौंह ।
यातें नाहिन और दुख प्यारी तेरी सौंह ॥
जो जानत अपराध कछु दीजै दण्ड विचारि ।
भुजनि बाँधि रद अधर धरि नखछद करि सुकुमारि ॥
तुम जीवनि भूषन प्रिये तुमही हौ निज प्रान ।
और करहु सब जो रुचै बोच न मानहु आन ॥

सोरठा ।

मेरी है गति एक, तव पदपङ्कज की प्रिये ।
अपने हठ की टेक, छाडि कृपा करि लाडिली ॥

दोहा ।

मोहन के मोहन वचन सुनि मोहनी मुसकाइ ।
प्यारी प्यारा प्यार सो ढरकि लियो उर लाइ ॥
जब देखे खेलत हँसत रस में दोउ सुकुमार ।
हित ध्रुव तिहि छन सखी सब करैं प्रान बलिहार ॥

इति श्रीमानलीला सम्पूर्णम् ।



अथ रहसिलता लिख्यते।

दोहा।

जो रस श्रीहरिवंश कहि विरलो समुझनहार
एक दोइ जो पाइये खोजो सब संसार ॥ १
नव किशोर सुकुमार तन मृदु भुज मेले अंश
जोरी बनी सनेह रस प्रगट करी हरिवंश ॥ २
नवदूलह नवदुलहिनी एक प्राण द्वै देह
वृन्दावन बरषत रहैं नवल नेह को मेह ॥ ३
कहाकहों पानिप मुखनि छविहि नाहिँ कछु वोर
राजत ऐसी भाति मनु द्वै ससि चतुर चकोर
सीसफूल सिखिचन्द्रिका छवि के उठत भकोर
मानों छत्र सिँगार ढिग निरतत मोरी मोर
विवि भालन विवि वरन की वेंदी दई अनूप
मनु अनुराग सिँगार को जोरो वनी सरूप ॥ ५

सोरठा।

लोचन परम रसाल, कजरारे सुठि सोहने
चञ्चल बड़ विसाल, अनियारे मनमोहने ॥ ६

चन्द्रायण ।

देखत आप में रूप न कबहुँ अघात हैं ।
दोऊ एक रस रीति प्रेम न समात हैं ॥
पल पल में रुचि बढै सखी मुसकाति हैं ।
परिहा मुख सों मुख रहे जोरि तऊ ललचात हैं॥

दोहा ।

झलकनि बेसरि दुहुनि की उपमा कही न जाइ।
खास पवन मुकतनिडुलनि सो छवि रहि उर छाइ॥
कहाकहों छवि नासिकनि शुक तिल फूलनिडारि।
अधर सुरग बधूक में बिम्ब पवारिनिवारि ॥
चिबुकमध्य बनि सहजही बिंदुकन अतिहि अनूप।
पिय सावर को मन मनो पर्यो प्रेम के कूप ॥
बङ्कचितवनी रसभरी बेधे प्रीतम प्रान ।
यद्यपि सूर प्रवीन हैं भूले सबै सयान ॥ ११ ॥
रूप घटी छवि की छटा उमड़ी रहत अनेक ।
कैसे सकै सँभारि सखि पिय चित चातिक एक॥
छुटे बार सोंधे सुने श्रमजलकन मुख जोति ।
मनु सींवा सिंगार की बनी कण्ठ परि पोति ॥

अथ रहसिलता लिख्यते ।

दोहा ।

जो रस श्रीहरिवंश कहि विरलो समुझनहार ।
एक दोइ जो पाइये खोजो सब ससार ॥ १ ॥
नव-किशोर सुकुमार तन मृदु भुज मेले अंश ।
जोरी सनी सनेह रस प्रगट करी हरिवंश ॥ २ ॥
नवदूलह नवदुलहिनी एक प्रान है देह ।
वृन्दावन बरषत रहैं नवल नेह को मेह ॥ ३ ॥
कहाकहो पानिप मुखनि छविहि नाहिँ कहुवोर।
राजत ऐसी भाति मनु है ससि चतुर चकोर ॥
सीसफूल सिखिचन्द्रिका छवि के उठत झकोर।
मानो छत्र सिंगार ढिग निरतत मोरी मोर ॥
बिबि भाजन बिबि बरन की बेंदी दई अनूप ।
मनु अनुराग सिंगार को जोरो बनी सरूप ॥५॥

सोरठा ।

लोचन परम रसाल, कजरारे सुठि सोहने ।
चञ्चल बङ्क बिसाल, अनियारे मनमोहने ॥ ६ ॥

चन्द्रायण।

देखत आप में रूप न कबहुँ अघात हैं।
दोऊ एक रस रीति प्रेम न समात हैं॥
पल पल में रुचि बढे सखी मुसकाति हैं।
परिहां मुख सो मुख रहे जोरि तउ ललचात हैं॥

दोहा।

झलकनि बेसरि दुहुनि की उपमा कही न जाइ।
खास पवन मुकतनि डुलनि सो छवि रहि उर छाइ॥
कहा कहौ छवि नासिकनि शुक तिल फूलनि डारि।
अधर सुरग बधूक में बिम्ब पवारिनिवारि॥
चिबुकमध्य बनि सहजही बिंदुकन अतिहि अनूप।
पिय सावर को मन मनो पर्यो प्रेम के कूप॥
वह्व चितवनी रसभरी बेधे प्रीतम प्रान।
यद्यपि सूर प्रवीन हैं भूले सबै सयान॥ ११॥
रूप घटी छवि को छटा उमडी रहत अनेक।
कैसे सकै सँभारि सखि पिय चित चातिक एक॥
छुटे बार सौंधे सुने श्रमजलकन मुख जोति।
मनु सौंवा सिगार की बनी कण्ठ परि पोति॥

जलजहार हीरावली रतनावली सुरंग ।
मनु अनुराग सरोवरै उठत है रूप तरंग ॥१४॥
पानिप झलक कपोल पर अलक रही सुठि सोहि।
रसिकलाल पाइनि परत छिन २ यह छवि जोहि॥
कहि न सकत अगनि प्रभा मेरो मति अतिहीन।
चन्द्र सेमन्तक दामिनी जम्बूनद रद कौन ॥१६॥
मोतिन की लर बीचि बिच कण्ठ गुराई रेख ।
निरखि पस्यो मनमोह फँद बिरुझ्यौ मोहन वेष॥
कुच कमलन की छवि निरखि रहे लाल ललचाइ।
अतिबिसालअँखियनि निरखि चितई मुरिमुसकाइ॥
अतिसुदेस अँगिया बनी कसनि कसी छवि देत।
भुजमूलन की गौरता पिय प्रानन हरि लेत ॥
सोभा की सरिता उदर नाभि भँवर रस ऐन ।
परे तहां निकसत नहीं प्रीतम के मन नैन ॥२०॥
बसन सुहाने आत सुरंग चुनि पहिराये बानि ।
मेंहदी परम सुरग सो रचे चरन मृदु पानि ॥
प्रेमवेलि दुहु में बढी फूली फूल विलास ।
निसिदिन पहिरे रहत उर दम्पति हार हुलास॥

पिय नैननि मैं प्रिया बसै प्रिया नैन मे पीय ।
हिय सो हिय लागी रहैं मिलि रहि जिय सों जीय॥
दरसत परसत हँसतहो बीते कलप अनेक ।
कबहुं न पिय आई हियें मिलि बैठो घरि एक॥
अति उदार सुकुमार दोउ रसिक सूर रस माहिँ।
छिनछिन बाढ़त चौपमैं नेक मुरत मन नाहिँ ॥
रसिक रँगीलि रँगभरे अतिही रस लै आहि ।
अद्भुत छवि को माधुरी जीवत हैं दोउ चाहि ॥
वदन किशोरी चन्द्र मनु भये किशोर चकोर ।
पल न परत निरखत नवल नैननि कोरनि ओर॥
बङ्क भृकुटि अति सोहनी विचविच मुसकनिमन्द।
कैसे निकसै परयो मन रचे जहा द्रुत फन्द ॥
देखि दसा पिय लाल की रही वाम तन घूमि।
कोमल हिय अति हित सो लागी पियहिय भूमि॥

सोरठा।

अद्भुत प्रेमविहार, रह्यौ प्यार ध्रुव छाइ कै ।
तैसइ दोउ सुकुमार, और सखिन गति एकही॥

दोहा।

पिय को मन प्यारी प्रिया प्यारी को मन लाल।
पहिरे पट तहँ तन वरन चलत एकही चाल ॥
सील सुभाव सनेह गुन वय अरु रूप समान ।
रँगे परस्पर एक रँग अति प्रवीन रसजान ॥
छिनछिन बाढत नेह नव पल पल रूप तरंग ।
चूक रस प्रेम छके रहैं भीने रंग अनंग ॥ ३२ ॥
मोहे मोहन मैनरस चितवति भौहनि भाइ ।
कबहुँ विवस चेतत कबहुँ प्यारी प्यार उपाइ॥
खेलत रहसि निकुञ्ज मे अतिही रहसि जु केलि।
लपटी प्रेम तमाल सो मनो रूप की वेलि ॥
नूपुर भूषन मनि झलक किङ्किनि सब्द अपार।
सखियनि हियो सिरात सुनि झनक२ झनकार॥
कबहुं बात मुसकात बिच फिरिफिरि फिरि लपटात
ऐसे रंग विहार मे तदपि न सखी अघात ॥३०॥
रीति दुहुन की एकही हारति नाहिन कोइ ।
जो छिन आवत है सखी चौप चौगुनो होइ ॥
लागे आनँदवेलि सो चितवनि मुसकनि फूल ।
लाल वसन तजि के मनो पहिरे फूल दुकूल ॥

नैन कटाछनि की छटा चितै रहै मुरझाइ ।
तबहिं कुंवरि दै अधररस लीने उर सों लाइ ॥
पिय की औषधि है यहै अधरसुधारस पान ।
एक लाडिली सहजही जिनकी जीवनि-प्रान ॥
अङ्गनि की छवि चितइबो यह जीवनि पिय जीय ।
और भुजनि भरि हेत सों रहत लाइ जब हीय ॥
रसपति रतिपति भूलि रहि देखत अद्‌भुत रीति।
घटत न कबहुं बढ़त रहै छिनछिन नवनव प्रीति॥
हँसि चितवत जब लाडिली डगमगात सुकुमार।
अति प्रवीन रसनागरी थाभिं लेत तिहि बार ॥
बिबस होत जब दोउ पिय माते प्रेम अनग ।
रहत सहेली सहचरी सावधान तिहि संग ॥४५॥
अधर अधर हिय सो हियौ उरजनि सो पियपानि
अगनि आवत चेत भय समझत सखी सुजान ॥
कबहुं प्रिया पट पीय के पिय प्यारी के बास ।
पहिरे दोउ आनन्द मे निरतत रासविलास ॥
हावभाव निरतत मनो चितवनि सुलप सुदेस ।
उरप तिरप झटकनि भुजनि खुले सगबगे केस ॥

अधरन की जुरी मराडली करनि फिरनि सुखमूल।
नैन सैन दैबो सरस मुसकनि वरषत फूल ॥४८॥
राग वचन धुनि भूषननि बाजे वजै अनग ।
सखी मृगी रहि मोहि के जिनके प्रेम अभंग ॥
निसिदिन है अवलम्ब यह अद्भुत जुगलविहार।
ललितादिकनिजसहचरी छिनछिनकरतिसिंगार॥
यह रस तौ कछु सुगम नहिं तन मन ते अतिदूरि।
जानत तेई रसिकजन जिनकी जीवनि मूरि ॥
ब्रह्मादिक मुकटनिसहित जिनको धरत है सीस।
प्रियाचरन जावक रचत तेइ वृन्दावन ईस ॥
यह विलास जो चिन्तवत चिन्ता सब मिटि जाइ।
आनँद को दीपक दिपै निसदिन तिह उर माहि॥
यह रस परस्यो नाहिं जिन तिनहि न नेक जनाइ।
जैसे धन को धनी ध्रुव राखत दूरि दुराइ ॥५५॥
सहज अलौकिक प्रेमवर दम्पति रहे लुभाइ ।
लौकिक रसना कि कहौ कैसे वरन्यो जाइ॥५६॥
वृन्दावनवर कलपतरु सर्वोपरि ध्रुव आहि ।
मनहूँ के जो चिन्तवत देत तबहिं फल ताहि ॥

दोहा रहसिलतानि के अष्ट उपर पञ्चास ।
सुनत सुनावत बढै उर हित ध्रुव प्रेमविलास ॥

कुण्डलिया ।

बार बार तो बनत नहिँ यह संयोग अनूप ।
मानुषतन बृन्दाविपिन रसिकनि संग विरूप ॥
रसिकनि संग विरूप भजन सर्वोपरि आही ।
मन दे ध्रुव यह रंग लेहु पल पल अवगाही ॥
जो छिन जात सो फिरत नहिँ करहु उपाइ अपार
सकल सयानप छाडि भजि दुर्लभ है यह वार ॥

इति श्री रहसिलता सम्पूर्णम ।



अथ प्रेमलता लिख्यते ।

चौपाई ।

प्रथमहि शुभ गुरुपद उर आनों । बात प्रेम को कछुक बखानो ॥ और कृपा रसिकनि की चाहौ । तब या रस के सर अवगाहौं ॥ लाल लाडिलो जो उर आनी । तैसो मोपै जाति ब खानी ॥ घटि बढि अच्छर जो कहुं होई । लेहु बनाइ कृपा करि सोई ॥ रसिक रसिकनी को जस जानो । और कछू जिय जिनि उर आनी ॥ कही प्रेम की गति ध्रुव यातें । सुनतहिं सरस होत जिय जातें ॥ अरु रसरीति पन्थ पहिचानै । तब या रस के स्वादहि जानै ॥ ७ ॥

दोहा ।

जिन नहिं समझ्यौ प्रेम यह तिनसो कौन अलाप।
दादुरहू जल मे रहै जानै मीन मिलाप ॥ ६ ॥

चौपई ।

खान पान सुख चाहत अपने । तिनको प्रेम छुवत नहिं सपने ॥ जो या प्रेम हिंडारे भूलै ।

तिनको और सबै सुख भूलै॥ प्रेमरसासव चाख्यौ जबही। और रंग चढै भुव तबहीं॥ या रस में जब मन परै आई। मीन नीर की गति ह्वै जाई॥ निसिदिन ताहि न कछू सुहाई। प्रीतम के रस रहै समाई॥ जाको है जासों मन मान्यौ। सो है ताकै हाथ बिकान्यौ॥ अरु ताके अँग सँग की बातें। प्यारी सब लागत तिहि नातें॥ रुचै सोई जो ताकों भावै। ऐसी नेह की रीति कहावै॥ जो रस लाल लडैतो माहीं। ऐसो प्रेम और कहुं नाहीं॥ १७॥

दोहा।

ब्रजदेवी के प्रेम की बँधी ध्वजा अति दूरि।
ब्रह्मादिक बाछत रहैं तिनके पद की धूरि॥

चौपाई।

तिनहूं को मन तहा न परसै। ललितादिक तिहि ठा छवि दरसै॥ नित्य विहार अखंडित धारा। एक बैस रस मधुर विहारा॥ नित्य किशोर रूप निधि सींवा। विलसत सहज मेलि भुज ग्रीवा॥ तिन बिच अन्तर पलको नाहीं।

तउ तिरखित प्रीतम मन साहो ॥ अद्भुत सहज रग सुखदाई । तहा प्रेम की एक टुहाई ॥ पिय गजमत्तन अकुस के वस । परम सुछन्द फिरत अपने रस ॥ देखतही तिनकी परछाहीं । मदन कोटि व्याकुल ह्वै जाहीं ॥ ते मोहन-वस कीने गोरी । राखे बाँधि प्रेम की डोरी ॥ छुटत न क्योहूं ऐसे अटके । प्रान हारि चरनन तर लटके॥ प्रीति की रीति लालही जानें । तजि प्रभुता बिन मोल बिकाने ॥ तैसइ रसिक प्रवीन किशोरी । रसनिधि नेह के सिन्धु झकोरी ॥ पिय को राखति नैननि आगे । हुलसि हुलसि प्रीतम उर लागे ॥ अवधि प्रेम की सहजहि प्यारे । वरवस प्रेम दुहुन मन मारे ॥ एक रग रुचि रहि सव काला । उज्जल प्रेम लाडिलो लाला ॥ ३२ ॥

दोहा ।

तन मन रूप सुभाव मिलि ह्वै रहै एकै प्रान ।
जीवनि मुसकनि चितइवो अधररसासव पान ॥

चौपाई ।

वृन्दावनघन राजत कुंजे । विहरत तहां रसिक

सुखपुंजैं ॥ एक प्रान विवि देह है दोऊ। तिन समान प्रेमी नहिँ कोऊ ॥ सब पर अधिक जानि यह प्रेमा। ताके वस भे तजि सब नेमा ॥ या सुख पर नाहिन कोई। जातें सो जो भेटी होई ॥

दोहा।

अद्भुत नित्त अभूत रस लाल लाडिलो प्रेम ।
छिन छिन नख मनि चन्द्रकनि सेवत हैं सुख नेम॥

चौपाई।

प्रेममई रस मे न विनोदा। नव नव उप जत हैं दोउ कोदा ॥ तिहि विहार-रस मगन विहारी । जानत नहिँ कित द्यौस निसा री ॥ जो कोउ कोटिक भाति वखानें । बिन स्वादी या रस नहि जानें ॥ रहत हैं दिनहि प्रेम सर साई। तहा मान को नावि समाई ॥ सूक्षम प्रेम न मनमे आवे। स्थूल रूप सबहो को भावे ॥ महा मधुर रस सब तें न्यारो। जिहि ठा दुहुन अपन पौ हार्यो ॥ तिनहि देखि आसक्तिहु भूलो। है आसक्ति सुख रस में झूली ॥ ४५ ॥

दोहा।

लाल लाडिली प्रेम तें सरस सखिन को प्रेम ।
अटको है निज प्रीतिरस परसत तिनहि न नेम॥

चौपई।

सखियन के सुख पर सुख नाहीं। आनँदमोद रँगी मनमाहीं॥ रूपरसासव यहै अहारा। तन मन की कछु नाहिँ सँभारा॥ एकहि रस नित भीजी रहहीं। साँझ भोर समझ्यो नहिँ कबहीं॥ सो रस करत रहत हैं पानें। निसिबासर बीतत नहिँ जानें॥ या रस सों जाको मन मान्यौ। सोइ ध्रुव रसिकनि प्रान समान्यौ॥ ५१॥

दोहा।

छिन छिन नवलविहार मे करत हैं नवल सिँगार।
रुचि तरग पल पल तहा बाढत रहत अपार॥

चौपाई।

करि सिँगार जब दोउ निसरे। छबि सों नव निकुज तें निकरे॥ भयो प्रकास नखमनि दुति ऐसो। कोटि चन्द्र आभा नहिँ तैसो॥ तिनिकी रूप न बरनें जाहीं। मोहत मैन देखि परछाहीं॥

हित की सींव सहेली सोहैं। चहुँ दिसि मनो च
कोरी जोहैं ॥ अगनि की निज सोरभताई ।
जहँ तहँ पूरि रही वन माही ॥ सो सुवास जो
नेंकहि पावै । प्रेम विवस तनसुधि विसरावै ॥
परे प्रेम के फन्द भँभारो । सर्वसु प्रान रहै तहँ
हारो ॥ तिहि बिन ताहि न और सुहाइ । बिन
देखे हीयो अकुलाइ ॥ सुनत श्रवन भूषन भन-
कारा । षग मृग चकित थकित जलधारा ॥ मे-
हँदी रँग पद अम्बुज बने । धरत अवनि पर छवि
को गने ॥ लटकि लटकि अलबेली भांति । ल-
पटि लाल उर मृदु मुसुकाति ॥ ऐसी छवि ध्रुव
नैननि माझ । रही निरन्तर भोर ऽरु साझ ॥ प्रेम
वेलि वृन्दावन फूली । पिय तमाल असनि पर
भूली ॥ देखि महाकवि सुधि बुधि भूली । सब
सखियनि की जीवनिमूली ॥ तिनि सखियनि
की कृपा मनाऊँ। या रस की कनिका जो पाऊँ॥

दोहा।

निसिदिन तो नाँचत रहौं वृन्दावन रस ऐन ।
छिन छिन दम्पति छवि छटा छाइ रहौ ध्रुव नैन॥

इति श्रीप्रेमलतासम्पूर्णम्।

अथ प्रेमावली लिख्यते ।

दोहा ।

प्रगट प्रेम कौं रूप धरि श्रीहरिवंश उदार ।
राधावल्लभ लाल को प्रगट कियौ रस सार ॥
हरिवंस चन्द सब रसिकजन राखे रस मे बोरि ।
प्रेम-सिन्धु विस्तार कै नेम मेंड दई तोरि ॥ २ ॥
रूपवेलि प्यारी बनी प्रीतम-प्रेम तमाल ।
द्वै मन मिलि एक भये राधावल्लभ लाल ॥ ३ ॥
लपटि रहे दोउ लाडिले अलबेली लपटानि ।
रूपवेलि विवि अरुझि परि प्रेम सेज पर आनि ॥
प्रेम रीति निज आहि जो तामे लाल प्रवीन ।
अंग अंग सब हारि के रहे आप ह्वै दीन ॥ ५ ॥
अलबेलो नागर जहाँ धरत चरन छबिपुञ्ज ।
पलकनि को करि सोहनी देत कुवर तिहि कुञ्ज ॥
धरति भावती पग जहाँ रहत देखि तिहि ठौर ।
को समुझै यह सुख सखी बिना रसिक सिरमौर ॥
भरि आये दोउ नैन जहँ रहे नेह बस भूमि ।
तिहि तिहि ठा काहे भई जून प्रानति को भूमि ॥

देखि प्रेम पिय की सखी नैन भरे जल आइ ।
समझि दसा उनकी तबहि पुतरिनि लयौ समाइ ॥
लिये दीनता एकरस अहा प्रेम रँग रात ।
ऐसी प्यारी पीय को देखतहूं न अघात ॥ १० ॥
जावक रँग भीने चरन गोर बरन छबि सींव ।
निरखत पिय अनुराग सों ढरी जाति अध ग्रीव ॥
अङ्ग अङ्ग सब लाल के झुकति प्रिया की ओर ।
सहज प्रेम कौ ढार पर्यौ बँधे नैन की कोर ॥
जिनकी है यह प्रेमरस सोई जानत रीति ।
ज्यौं हारे तें पाइये नेह खेत मे जीति ॥ १३ ॥
मन के पाछे मन फिरे नैननि पीछे नैन ।
यहै एक सुखलाल को पूरि रह्यौ उर ऐन॥१४॥
नैननि छावत फिरत पिय पत्र फूल बन जीत ।
प्रान प्रिया दृग छटा जल सींचे सखि यह हेत ॥
नैननि बाढी तृषा अति ज्यौं ज्यौं देखत रूप ।
पानिहि लागै प्यास जो कहा करै ढिग कूप ॥
बिटप डारि अवलम्बि पिय ठाढे चितहि न चैन।
झलझलात भरि प्रेम जल झलकत सुन्दर नैन ॥

और सबै सुख देह के पिय मन तें गये भूलि ।
अवलोकत सुख माधुरी रहे प्रेम रस झूलि ॥१८॥
हेरि हेरि हिय गहबरै भरि भरि आवै नैन ।
कौन अटपटौ मन परो मुख पै कहत बनै न ॥
चितवनि सो चित रँगि रह्यौ मुसकनि रसबस मैन।
अँग अँग दीप अनङ्ग मनु परत पतङ्ग जु नैन ॥
अद्भुत अगनि की झलक उठत तरंग सुभाइ ।
समुझि दसा पिय की प्रिया रहति छिपाइ छिपाइ॥
प्रीतम प्यासे प्रेम के सो रस कह्यौ न जाइ ।
नैन रूप ह्वै जाइ जौ प्यास न तऊ सिराइ॥२२॥
अद्भुत रूप बिलास सुख चितवत भूले अंग ।
सहज सिन्धु सुख मैं परे नखसिख प्रेम अभंग ॥
नयौ नेह नेही नये नयौ रूप सुखरासि ।
नयौ चाव बिलसैं सहज परे प्रेम की पासि॥२४॥
यदपि रहत इक संग मिलि मन चंचल अति लोल।
सहज प्रेम के सिन्धु मे दोऊ करत कलोल ॥
रचि रचि बीरी देत पिय महा प्रेम की रासि ।
सर्वस है जिनके यहै चितवनि कै मृदुहासि ॥

पीकदान लीने कुंवर चितवत मुख की ओर ।
रहे उगर की आस धरि ज्यों प्रति चन्द चकोर ॥
मनबच कायिक एकरस धरे महाव्रत प्रेम ।
प्रानप्रियहिं सेवत कुंवर याही सुख को नेम ॥
प्यारी सर्वसु लाल के लाल प्रिया के प्रान ।
सहज प्रेम दुहुं मे वढ्यौ फीके मे रस आन ॥
मन्द मन्द मुसकाति जब वेसरि तरल तरङ्ग ।
चिते चित्रवत रहे पिय सिथिल भए सब अङ्ग ॥
मुकर पानि लिये लाडिली वैठी सहज सुभाइ ।
अनियारी अँखियनि कियौ अञ्जन रुचिर बनाइ ॥
सोच रही तिहि छिन कछू इत उत चितवत नाहि ।
प्रीतम मन की मृदुलता गडी आइ मनमाहि ॥
प्रेम रूप की सुख सहज सो भ्रुव कहत बनै न ।
कै जानै मन तिहि विध्यौ कै समुझै दोउ नैन ॥
नित्य सहज दूलहू कुंवर दुलहिनि अति सुकुवारि ।
नयौ चाव नितही रहै अद्भुत रूप निहारि ॥
नवकिशोर धन्नत सदा आनन्द की दोउ गोभ ।
नई अटक की चौपढिन परे प्रेम के लोभ ॥३५॥

और भोग नहि प्रेम सम सब कौ प्रेम सिँगार।
तिहि अवलम्बैं रसिक दोउ सकल रसनि कौ सार॥
प्रेम मदन मद किये रद और सकल सुख जीत।
कुंवरि सुभाइनि रँगरँग्यौ छिन छिन होत अचेत॥
लाल नैन भए लाल के रग रँगीलो लाल।
अन्तर भरि निकस्यौ चहत दृहि मग मनु अनुराग॥
लै सुरङ्ग जावक सुकँर चरननि चित्र बनाइ।
मृदु अँगुरिनि कौ छवि निरखि पुतरिनि सौं रहैलाइ॥
दसन खण्डि अति रीझि के पिय मुख बीरी दीन।
सींवा दोउ अनुराग की भए एक रस लीन॥
पट भूषन जे कुंवरि के प्रीतम के ते प्रान।
अति अनन्य रस प्रेम मे परसत नहि कछु आन॥
ते पटभूषन पहिरि पिय सहचरि जौ बपु बानि।
फिरत लियें अनुराग सौं कुसम बीजना पानि॥
प्रेम कुवर कौ समुझिकै प्रेम वारि भरि नैन।
रही लपटि पिय के हिये सो सुख कहत बनै न॥
अमित कोटि जुग कल्प लौं राखे उरजनि माहि।
ते सब लवरसरैनि सम बीतत जाने नाहि॥४४॥

प्रिया प्रेम आसव महा मादिक रहे दिन रैन ।
कैसे छूटत विवसता भरि भरि पीवत नैन ॥४५॥

महामोहनी मन हर्‌यौ तन डोलत तिन सङ्ग ।
बोलत नहि चितवत मनै बस्यौ जादू किहि ढङ्ग ॥

बिन देखे रेखत न कछु छवि छायौ उर ऐन ।
कुंवरि राधिका लाडिली पिय नैननि के नैन ॥

जहँलगिसुखकहियतसकलसुनिभुवकहतबिचारि।
सहज प्रेम के निमिष पर तें सब डारे वारि ॥

यह सुख समझन को कछू नाहिन आन उपाइ ।
प्रेम दरीची जो कहू सहज कृपा खुलि जाइ ॥

एकै प्रेमी एकरस राधावल्लभ आहि ।
भूलि कहै कोउ और ठाँ झूठौ जानो ताहि ॥

तीनलोक चौदह-भुवन प्रेम कहू भुव नाहिं ।
जगमगि रह्यौ जराव सौ श्रीवृन्दावन माहिँ ॥

प्रेमी बिछुरत नहिं कहूं मिल्यौ न सो पुनि आहि।
कौन एकरस प्रेम कौं कहि न सकत भुव ताहिं॥

ढूंढि फिरे त्रैलोक जौं वस्तु कहू भ्रुव नाहिं ।
प्रेम रूप सोउ एकरस बसत निकुञ्जनि माहि ॥

नित्य भूमि मण्डल सहज श्रीवृन्दावन ऐन ।
रतनजटित जगमगि रह्यौ रसिकनि मन सुखदैन॥
तरनिसुता चहुँदिसि बहै सोभा लिये अथाह ।
मनो ढर्यौ सिङ्गाररस मण्डल बाँधि प्रवाह ॥
आवत उपमा और उर अद्भुत परम रसाल ।
वृन्दावन पहिरी मनो नीलमनिन की माल ॥
हेम बरन अद्भुत धरनि मनिन खचित बहुरंग।
बिचि बिचि हीरनि की झलक मानो उठत तरंग॥
मृगी मयूरी हंससिनि भरी प्रेम आनन्द ।
मत्त मुदित पीवत रहैं जुगल कमल मकरन्द ॥
कुञ्ज कुञ्ज प्रति झलमलै आसन सैन सुदेस ।
सहजसील छिनछिन नई कहि न सकत छबिलेस॥
नेकु होस ठाढो कुवरि जिहि फुलवारी माहि ।
पत्र फूल तहँ के सबै पीत बरन ह्वै जाहि ॥६०॥
प्रेमरूप के मोद की सुन्दर देह रसाल ।
सोइ लडैती लालजी कीनी है उर माल ॥६१॥
रोम रोम प्रति लाडिलौ रूपरूप की खानि।
प्रीतम की जीवनि यहै सरस मन्द मुसकानि ॥

अति सुलज्ज अनुरागयुत अनियारे छवि ऐन ।
अरुन असित सित साहने काजर भीने नैन ॥
श्रवनाइत बाँके चपल घूघट पट न समात ।
अवलोकत जिहि ओर को छविवरषा ह्वे जात॥
हावभाव लावण्यता कही सकल जे कोक।
निसिदिन कर जोरे तहाँ सेवत नैननि नोक ॥
अति सुदेस रह्यो भलकि के बेंदा सुरँग रसाल।
मनो सुहागऽनुराग को प्रगट विराजत भाल ॥
नखसिख भूषन कवि रहे कहि न सकत वाकुरूप।
सीस फूल सिङ्गार को मानौं छत्र अनूप ॥६७॥
भलकिकपोलनिकहँकहोमुखपानिपबहुभाँति ।
अँखिया रपटत चिते तहँ डीठि नहीं ठहरात॥
नासा बेसरि फबि रही सोभा को मिति नाहि।
मनो मीन तहँ थरहरे पर्यो रूप जल माहि ॥
वरकपोलपरअसिततिलअलकरहीतहँजाइ ।
प्रगट लाल को मन मनो पर्यो फन्द विच आइ॥
नैन अधर कुच कर चरन भलकत अद्भुत रग।
कनक वेलि मनु फूल रहो नखसिख कमल सुरग॥

प्रिया बदन वर कञ्ज पर भ्रमत भृङ्ग पिय नैन।
छवि परागरस माधुरी पीवतहू नहि चैन ॥७२॥
ठौर ठौर पिय रचत है आसन सुमन रसाल।
को जानै कहँ बैठि है अलबेली नव बाल।७३॥
समुझि हेतु पिय को तबहिं बैठी तहँ मुसिकाइ।
पिय ग्रीवाँ भुज मेलिकैं अँग अँग रहि लपटाइ॥
रची सेज मृदु दलनि लै अरुन पीत अरु सेत।
तापर राजै लाडिलो इतनो मन कौ हेत ॥७५॥
रंग रंग के सुमन पिय लै रचि माल बनाइ।
तन मन को सुख को कहै जब देखत पहिराइ॥
रूप माधुरी की झलक निरखि रीझि सुख पाइ।
चहुंदिसि फिरि आवत कुवर पगनि सीस रहै लाइ॥
रूपसिंध में मन पर्यो ढरत नैन दुहु नीर।
डगमगात सखियनि गहे देखे लाल अधीर॥७८॥
लये अङ्क भरि लाडिली विवस लाल को जानि।
कही परत सखि कौन पै विचि मन् की अरुझानि॥
प्रेम प्रेम मन मन समझि नैन सजल झलकाति।
मुख निसरत नहि बैन कछु निवसत दोउ ह्वै जात॥

पिय-प्यारो दोउ रँग भरे ढरे सेज पर आनि ।
बिवस सखी चितवत खरी महाप्रेम लपटानि ॥
परे प्रेम सुख रग मे दोऊ नवलकिशोर ।
इतनी नहि जानत सखी निसा होत कब भोर॥
पाक कहूं अञ्जन कहूं मुकतावलि रहि टूटि ।
सिथिल वसन भूषन कहू अलक रही कहु छूटि ॥
श्रम जल कन छवि बदन पर चितवत प्रीतम ताहि।
पानिप कौं पानी मनौ प्रगट देखियत आहि ॥
अञ्जन तिल रह्यौ अधर पर नैननि पर लगि पीक।
इत हट करी सिँगार की उत दृढ़ प्रेम की लीक॥
एक प्रेम विवि मन हरे अरुभी मृदु भुज ग्रीव ।
उभै सिधु मिलि उमडि चले रहत तहाँ क्यौं सींव॥
पीवत मुख छवि माधुरी व्याकुल रहे तऊ नेन ।
रोम रोम बाढहि तृषा जहाँ प्रेम को नेम॥८६॥
रस रंगी रस रँग में भीजे सहज सनेह ।
परत प्रेम आनन्द मे दुहुंनि भूलि गई देह॥८७॥
भए अचेत पुनि चेत के उठे कुंवर सुकुवार ।
नैना प्यासे रूप के पिवत डीठि भई वार ॥८८॥

कहि न सकों तिनिकी दसा छिनछिन नौतन नेह।
एक प्रान द्वै तहँ रहै देखन कौ है देह ॥८८॥
एक स्वाद ध्रुव एकरस प्रेम अखण्डित धार ।
इक छत प्रेम दशा रहै सकल सुखनि कौ सार॥
प्रेम तरंगनि मे परे छिन छिन प्रति यह केलि।
महामत्त घूमत फिरैं दोउ कण्ठ भुज मेलि ॥
विलसत नित्य विहार दोउ प्रेम खेल तिहि ठौर।
श्रौर कछू परसत नहीं महारसिक सिरमौर॥८२॥
प्रेमपगीं तैसो सखी रँगी दुहुनि के हेत ।
सहज माधुरी रूप कौ नैननि भरि भरि लेत ॥
अद्भुत प्रेम सखीनि के विमल अखण्डित धार।
रसिक कुवर दोउ लाडिले करि राखे उर हार ॥
सहज प्रेम की सींव दोउ नवकिशोर बरजोर ।
प्रेम कौ प्रेम सखीनि के तिहि सुख कौ नहि ओर॥
हारि हारि जीतत दोउ जीति जीति रहै हारि।
महाप्रेम देखत सखी जहँ तहँ रही विचारि ॥
नेकु भौंह की मुरनि मे लाल दीन है जात ।
जल सूखे जलजात ज्यौं बदन मृदुल कुमिलात॥

भयौ हियौ अनुराग सो रहि न सकी अकुलाइ।
लये लाइ पिय हीय सौं अधर सुधारस प्याइ ॥
मान मनावन छुटि गयौ पयौ उपटि तहँ प्रेम।
अन्तर भरि बाहरि भयौ रहे लौन ह्वै नेम ॥६६॥
सहज रूप को कञ्ज-मुख तामे मुख कानि मन्द।
जीवनि पिय दृग अलिन की सोई तहँ मकरन्द ॥
अलबेली हँसि कै जबहि पिय सौ कहि कछु बात।
धनिधनिकैमाँगतसखौतिहिछिनकोबलिजात ॥
रह्यौ झलकि बृन्दा विपिन कुवरि रूप कै तेज।
रहे कुवर छकि कै तहाँ धरि न सकत पत सेज ॥
लीने कर यहि लाडिली लै बैठौ वर अङ्ग।
बदन बदन पै जुरि रहे मनु मिलै कञ्जमयङ्क ॥
परम रसिक आमता दोउ भूली तिनिहि निहारि।
अँग अँग मिलि अरुझे रहे सकत नहीं निरवारि॥
प्रेम मदन कौ सुख जहाँ सहज प्रेम सिङ्गार।
आदि मध्य अवसान इक इक रस विमल विहार॥
बृन्दावन सरवर भयौ प्रेम नौर गभीर।
तामें मज्जत रसिक दोउ विसरे नैननि चौर ॥

सहज सघन छवि हरन मन श्रीवृन्दावन बाग ।
रह्यौ भूमि फलि कै तहाँ रस मै फल अनुराग॥
प्रिया वदन तहाँ झलमले सहज रूप को चन्द ।
बिमल प्रकाश अखण्ड भयौ सुधा प्रेम मकरन्द॥
श्रवत सोइ मकरन्द दिन प्रीतम नैन चकोर ।
प्रेम अमीरस माधुरी पान करत निसि भोर ॥
सघननिकुञ्जनिखोरिप्रति सुखको सहजनिवास ।
रही भूमि जहँ फूलि कै लता सुरङ्ग सुवास॥१०॥
परत दृष्टि जिहि सुमन पर पियप्रवीन यह जानि ।
धाइ कुँवर सोइ फूल लै देत कुँवरि को आनि ॥
विहरत दोउ अनुराग में नवला सो लिये पानि ।
न्यारे तन देखत सखो छुटत न मन लपटानि ॥
घटत न मन की चाह अब हारत नहि दृग चाहि
तृपत तऊ पिय लाडिलो कोन प्रेम रस आहि ॥
प्रेमफूल प्यारी प्रिया सुरँग सरूप सुवास ।
इक जीवनि आसक्ति पुनि मधुपलाल रहै पास ॥
अति सुकुवारी लाडिलो धरत चरन तिहिठौर ।
नैन कमल के दल तहा रचत रसिक सिरमौर ॥

प्रेम अम्बुसर विपिन वर अति अगाधि मतिनाहि।
कमलक मलिनी रसिक दोउ रहे फूलि तिहिँ माहिँ॥
भ्रमत सखी भ्रमरी तहां पीवत रूप पराग ।
पल पल प्रति बाढत रहै मादक नव अनुराग ॥
प्रेम खेल ब्रुन्दाविपिन सुभटनागरी स्याम ।
हाव भाव आयुध लिये करत सुखद संग्राम ॥

कुण्डलिया।

पियनैननि को मोद सखि पियनैननि को मोद।
रैन दिवस बीतत जिन्है सहजहि प्रेम विनोद ॥
सहजहि प्रेम विनोद रूप देखत दोउ प्यारे ।
लीन्हन मानत जीति दुहुनि जद्यपि मन हारे ॥
परे नवल नवकेलि सुरस हुलसत हिय सैननि ।
छिन २ प्रति रुचि होइ अधिक सुन्दरपियनैननि ॥

दोहा।

नित्य नवल ब्रुन्दाविपिन नित्य नवल धर हेम ।
नित्य नवल दोउ लाडिले नित्य नवल तहँ प्रेम ॥
ब्रन्दाविपिन विसाल पर प्रेम को खेल अपार ।
निवरत नहिँ छिन २ बढै तैसेइ खेलनहार॥१२१॥

बिन रसिकनि वृन्दाविपिन को है सकत निहारि।
ब्रह्मकोटि ऐश्वर्य्य के वैभव को तहँ हारि॥१२२॥
राधावल्लभ प्रेम को प्रेमावलि गुहि लीन ।
हित ध्रुव जेतिक बुद्धि ही तासों रचि २ कोन॥
घटि बढि अक्षर होइ जो तहा दृष्टि जिनि देहु।
राधावल्लभ माल जस यहै जानि उर लेहु॥१२४॥
प्रेमसार ध्रुव कछु कह्यौ अपनी मति अनुमान।
अति अगाध सुख सिन्धुरस ताको नाहिँ प्रमान॥
मन वच जो उर धारिहै प्रेमावलि को नित्त ।
प्रेम छटा ध्रुव सहजहीं उपजैगी तिहि चित्त॥

इति श्री प्रेमावलि सम्पूर्णम्।



अथ भजनकुण्डलिया लि०।

कुण्डलिया।

इससुता-तट विहरिवौ करि वृन्दावन वास ।
कुञ्ज केलि मृदु मधुर रस प्रेमविलास उपास॥१॥
प्रेमविलास उपास रहै इक रस मन मांही ।
तिहि सुख को कह कहौं मेरी मति है अस नाहीं॥
हितध्रुवयहरसअतिसरससरसिकनिकियौ प्रसस ।
मुक्तनि छाडें चुगत नहिं मानसरोवर हंस ॥२॥

दोहा।

रस भीज्यौं रस में फिरे रसनिधि जमुनातीर ।
चिन्तत रस में सनैं दोउ स्यामल गौर शरीर॥३॥

कुण्डलिया।

नवलरङ्गीलै लाल दोउ करत विलास अनङ्ग ।
चितवनिमुसकानिकुचनिकच परसनिउरजउतङ्ग॥
परसनि उरज उतङ्ग चाह रुचि अतिही बाढी।
भई फूल अँग अङ्ग भुजनि की कसनि है गाढी॥
यह सुख देखत सखिनि के रहै फूल लोइनकमल।
हित ध्रुव कोकलानि मे अति प्रवोन नागरनवल॥

कुण्डलिया।

मदन-केलि को खेल है सकल सुखनि को सार।
तिहिँ विहार रस मगन हैं और न कछु संभार॥
और न कछु सभार हार करि प्राणपियारी।
राखत उर पर लाल नेकहूं करत न न्यारी॥
याही रसको भजन तो नित्यरहो ध्रुवहियसदन।
कुञ्ज २ सुख पुञ्ज मे करत केलि लीला मदन॥

दोहा।

केलि वेलि फूली रहत चितवनि मुसकनि फूल।
तिहिँ लागे छवि फल उरज ढाके प्यार दुकूल॥

दोहा।

प्रेम दृषा को वेलि को केलि सदन रस थाहि।
परम रसिक नागरनवल पीवत जीवत ताहि॥

कुण्डलिया।

प्रेमहि सील सुभाव नित सहजहि कोमल बैन।
ऐसे तिय पिय हीय में बसत रहो दिन रैन॥
वसत रहो दिन रैन नैन सुख पावत अतिहीं।
पियाप्रेम रस भरो लाल तन पै चितवतहीं॥
देखो यह रस अति मधुर विसरावत सब नेमहि।
हितध्रुवरसिकरासिदोउदिनहिविलसतरसप्रेमहि॥

दोहा।

एकै सहज सुभाव यौ एकै विधि सब भांति ।
एक रङ्ग रुचि एक रस एकै बात सुहाति ॥ ६ ॥

कुण्डलिया।

सीसफूल झलकानि छवि चन्द्रिका की फहरानि।
ध्रुवके हियमे बसतहो विधि चितवनि मुसकानि॥
विधिचितवनि मुसकानि रही जो उर मे छाई।
तिहि रस केवल मनहि और कछु वे न सुहाई॥
या सोभा पर वारिये कोटि कोटि रति ईस ।
रीझि रीझि नषचन्द्रिकनि जब लावत पियसीस॥

दोहा।

सीसफूल सिखिचन्द्रिका सदा बसो मन मोर ।
अरु जब चितवत लाडिली पियतन नैननि कोर॥

कुण्डलिया।

ऐसे हिय में निवसिये नवकिशोर रसरासि ।
चितवनि अति अनुराग की करत मन्द मृदुहासि॥
करत मन्दमृदुहासि दोउ निज प्रेम प्रकासहिँ।
छके रहत मदमत्त रातिदिन मदन विलासहिँ॥
हितध्रुव छवि सो कुञ्ज में दै अंसनि भुज वैसे ।
मेरी मति इत नाहि कहूं उपमा दै ऐसे ॥१२॥

दोहा ।

नवकिशोर चितचोर दोउ परम रसिक सिरमौर।
ऐसे हिय में मिलि रहौ बचे नहीं कहू ठौर ॥

कुण्डलिया।

राधावल्लभलाल की विमल धुजा फहरात ।
भगवतधरमहु जीति के निज प्रेमी ठहरात ॥
निजप्रेमी ठहरात नेम कछु परसत नाहीं ।
अलक लड़े दोउ लाल मुदित हँसि २ लपटाहीं।
हित ध्रुव यह रस मधुर है सार कौ सार अगाधा।
आवैं तबही होय मे जब कृपा करैं श्रीराधा॥१४॥

दोहा।

महामाधुरी प्रेम निज आवे जिहि उर माहि ।
नवधा हू तिहिं रुचितनहि नेम सबै मिटिजाहि॥

कुण्डलिया।

राधावल्लभलाडिले अति उदार सुकुवारि ।
ध्रुव तौ भूल्यौ और तें तुम जिनि देहु बिसारि॥
तुम जिनि देहु बिसारि ठौर मोकौ कहुँ नाहीं।
पिय रँगभरी कटाच्छ नेकु चितवै मो माहीं ॥
बढ़ै प्रीति की रीति बीच कछु होइ न बाधा ।
तुमही परम प्रवीन प्रानबल्लभ श्रीराधा ॥ १६ ॥

दोहा।

अतिहि मृदुल नागरिनवल करुणासिन्धु उदार।
ऐसे शील सुभाव पर ध्रुव जावै बलिहार॥ १७॥

कुण्डलिया।

वृन्दाविपिन निमित्त है तिथि विधि मानै आन।
भजन तहां कैसे रहै खोयौ अपने पानि॥
खोयौ अपने पानि मूढ कछु समुझत नाहीं।
चन्द्रमनिहि लै गुहै काच के मनियनि माहीं॥
जमुनापुलिन निकुञ्जघन अद्भुत है रस को सदन।
खेलत लाडिलीलाल जहँ ऐसो है वृन्दाविपिन॥

दोहा।

होइ अनन्य इक रस गहै वृन्दावन रस रीति।
विधि निषेध मानै न कछु करै भजन सो प्रीति॥

कुण्डलिया।

वार वार तौ बनत नहिँ यह संजोग अनूप।
मानुषतन वृन्दाविपिन रसिकनि सँग विविरूप॥
रसिकनि सँग विविरूप भजन सर्वोपरि आही।
मनु दै ध्रुव यह रङ्ग लेहु पल पल अवगाही॥
जो छिन जात सो फिरतनहिं करहु उपाइ अपार।
सकल सयानप छाडि भजि दुर्लभ है यह वार॥

दोहा।

भजन रङ्ग सतसङ्ग मिलि वृन्दावन सौ खेत ।
एक कृपा ते जुरे सब याको चहियै हेत ॥२१॥
इस दोहा दस कुँडलिया कुण्डलभजनकौ आहि।
बाहिर पाइ न दीजियै छिन २ ये अवगाहि॥२२॥
भजनकुण्डली मे रहौ पग बाहिर जिनि देहु ।
एकै जुगलकिशोर सौं करि ध्रुव सहज सनेहु ॥

इति श्री भजनकुण्डलिया सम्पूर्णम्।

अथ बावनवृहत्पुराण की भाषा लिख्यते।

दोहा।

बावनवृहत्पुरान की कछु इक कथा बनाइ ।
भक्तन हित भाषा करी जैसें समुझी जाइ ॥ १ ॥
एक समै भृगुपिता सौ प्रश्न करी यह आनि ।
करि प्रनाम ठाढौ भयो आगे जोरे पानि ॥ २ ॥
एक असङ्का बढी उर चित्त रह्यौ बिसमाइ ।
सर्वोपरि सर्वज्ञ तुम हमहिँ देहु समुझाइ ॥३॥

नारदादि शुक स तजे किये भक्त सब गौन ।
आँचो रज व्रजतियन की यह धौं कारन कौन ॥
सुनहु पुत्र समझौ न तैं रह्यो भूलि भ्रम ज्ञान ।
सर्वोपरि ए हरि प्रिया इनकी कौन समान ॥
बहुत बरष हम तप कियौ इनकी पदरज हेत ।
सो रज दुर्लभ सबनि कौ हमहूं बनी न लेत ॥
और तियनि मे गिनहु जिनि ए श्रुतिकन्या आँहि ।
किय अधीन पिय सावरो प्रेमचितवनो चाँहि ॥
अबलगि तै समझ्यौ नहीं व्रज की रग रसाल ।
जो दिन बीते रस विना वादि गयौ सब काल ॥
ब्रह्मज्ञान में रहे भ्रमि और न कछू सुहात ।
छाडि रसमई अमृतफल चाखत सूखे पात ॥
ज्ञानी खोजत ज्ञान मे भजनी भक्त अपार ।
ते हरि ठाढे रहत हैं व्रजदेविन के द्वार ॥ १० ॥
एक भक्त वन्दन करत नहिँ चितवत तिन ओर ।
ब्रजवनितनि के पगनि सी लावत मुकुट किशोर॥
निगमनि अस्तुति रुचत नहिँ करत है तत्व विचारि।
जैसे भावत हेत सो ब्रजदविन की गारि॥ १२ ॥

अजहूं खोजत लहत नहिं ऋषिमुनिजनको पाँति।
द्वार द्वार ब्रजसुन्दरिन फिरत चक्र की भाँति ॥
सब भक्तन के सिरन पर हरि ईश्वर नँदलाल।
ब्रज में सेवक ह्वै रहे अजब प्रेम की चाल ॥
एक भजन हित सों करत नीके मानत नाहिं।
जैसे ब्रज जुवती तिनहिं ठेलि पगनि करि जाँहि॥
फिरत किशोर चकोर ज्यो बरसाने की ओर ।
घर घर प्यारो लगत है परे प्रेम को डोर ॥१६॥
चित्रसारि चितवत रहत जैसे घन तन मोर ।
चहूओर ग्रीवा फिरत ज्यो प्रति चन्द चकोर ॥
जबहिं द्वार वृषभान के आये नन्दकुमार ।
तिहँ छिन गति औरै भई रह्यो न देह सम्हार ॥
हाय हाय सब कोइ करै अद्भुत रूप निहारि।
कहा भयौ या कुंवर को देत प्रान सब वारि ॥
तनक भनक श्रवनन परी रहि न सकी अकुलाइ।
झाँकी सखियन संग तजि कुंवरि झरोखे आइ॥
लाज छाडि अति प्यार सो चितई कछु मुसकाइ।
सैनानि मे अति चतुर पिय रहे चरन सिर नाइ॥

अंग अंग प्रति फूल भइ आनंद उर न समाइ ।
भागमानि पहिचानि करि चले लाल सिर नाइ ॥
सर्वोपरि राधाकुवरि पिय प्राननि की प्रान ।
ललितादिक सेवत तिनहिं अतिप्रवीन रस जान॥
पहली पैरी प्रेम की व्रज कीनो निस्तार ।
भक्तनहित लीला धरी करुनानिधि सुकुमार ॥
रच्यो रास किय वचन हो आई मिलि व्रजनारि ।
प्रेमफाग खेली जहां सब सकोच निवारि ॥२५॥
ऋषिमुनि जोगिन के हिये कबहु न लसै व्रजचन्द
गहि लीनो व्रजसुन्दरिन डारि प्रेम को फन्द ॥
जाई व्रजवनिता कहैं सोइ लेत हैं मानि ।
नाचत ज्यो कठपूतरी तिनके आगे आनि ॥२७॥
बहुत भांति लीला रचत तैसइ भक्त अपार ।
अपनी २ रुचि लिये करत भक्ति विस्तार ॥२८॥
और चरित बहु भांति के कीने हैं जग केत ।
दूजो कारन नाहि कछु तें सब भक्तनि हेत ॥२९॥
अर्जुन पूछो कृष्ण सो मेरो एक सँदेहु ।
कौन भक्त प्यारे तुम्हें यह मोसों कहि देहु ॥३०॥

भगत जगत में बहुत हैं तिनको नाहिँ प्रमान ।
वैकुण्ठहु ते अधिक हैं मथुरा मण्डल जान ॥३१॥
तामे ताहू ते सरस व्रजमण्डल सुख खानि ।
ठौर काउ जिहि सम नहीं कहिजे कौन बखानि॥
अति सुदेस माया रहित द्वादस जोजन भूमि ।
जहा सदाइ व्रजवास को रहत कृष्ण दिन भूमि॥
मध्य रजत मुकुटमनि वृन्दावन रस कन्द ।
रस मे सुख मे तेज मे झलकत कोटिक चन्द ॥
एक रङ्ग रुचि एक रस अद्भुत नित्य बिहार ।
जहा किशोरा लाड़िली करा लाल उर हार॥३५॥
निसिदिन तौ पहिरे रहत रूपक मनि उजियार।
ता रस मे लटकी छकी अधर सुधा आधार ॥३६॥
अङ्ग अङ्ग मन मन मिले नैननि नैन विशाल ।
चारु वेलि प्यारी बनी छवि के लाल तमाल ॥
जोगी दुलहा दुलहिनी मोहनि मोहन आहि ।
परत न अन्तर निमष कौ जीवत रूपहि चाहि॥
महा मधुर रसमाधुरी नव नव वयस किशोर ।
अद्भुत रस मे मगन है नहिँ जानत निसि भोर॥

नव किशोर ता माधुरी सब गुन बिलसे सङ्ग ।
जुगलचरन सेवत रहैं रँगा प्रेम के रङ्ग ॥ ४० ॥
नित्य लाडिली लाल दोउ नित ब्रन्दावन धाम ।
नित्य सखी ललितादि निजु सेवत स्यामास्याम ॥
ब्रज मे सो लीला चरित भयौ जु बहुत प्रकार ।
सबकौ सार विहार है रसिकनि कौ निरधार ॥
ब्रन्दावन महिमा कछू कहौ सोइ सुनि लेइ ।
द्रुम द्रुम प्रति अरु लता प्रति लपट्यौ रहत सनेह ॥
महाप्रलै जबही भयौ रह्यौ न कछुवे आन ।
गिरिवन व्योम न भूमि रहि नहि नक्षत्र ससिभान ॥
सर सरिता सागर मिले अमित मेघ की धार ।
तीनि लोक जल चढि गयौ बूडि गयौ संसार ॥
कोटि २ उतपति प्रलै होत रहत इहि भाति ।
जैसे अरहट की घरी भरि २ ढरि ढरि जाति ॥
लोकपाल लीला चरित अब कछु दीसत नाहि
निगम रिचा भूली भमै चरत फिरै तिहि माहि ॥
सहज विराजत एक रस ब्रन्दावन निज भौन ।
मायाजल परसत नहीं अरु माया को पौन ॥४८॥

न्यारौ चौदह लोक तें वृन्दावन निज धाम ।
इकछत विलसत रहत नित सहजहि स्यामास्याम ॥
चहूँ ओर वृन्दाविपिन सेवत सब औतार ।
करत विहार विहारि तहँ आनँद रङ्ग विहार ॥
निगमनि सोच विचारि कैं यह ठहराई चित्त ।
भजन जहाँ कौ कीजिये इकछत रहै जु नित्त ॥
तब लागी अस्तुति करन बाढ्यौ उर आनन्द ।
जानै पूरन सरब पर श्रीवृन्दावन चन्द ॥ ५२ ॥
एकै पुरुष किशोर वर दूजौ नाहिन कोइ ।
जाकी इच्छा सहज यह सबकौ कौतिक होइ ॥५३॥
गावत जाको सुजस जस आनँद बढ्यौ अपार ।
देखि कछू छवि की छटा वृन्दाविपिन विहार ॥
रूप माधुरी देखि कछु विवस भये मुरझाइ ।
बाढी रुचि की चाह अति रहे ललचाइ लुभाइ ॥
काम कामना अति बढी यह उपजी उर आइ ।
खेलैं ऐसे रूप सग बनिता कौ तन पाइ ॥५६॥
तिन प्रति तब बानी भई यह श्रुति लीनी मानि ।
प्रगट होहु ब्रज जाइ तुम हमहु प्रगटिहैं आनि ॥

तहा सबै सुख पाइहौ जो जो करि मन श्रास ।
हम तुम एकहि सङ्ग मिलि करिहैं रासबिलास ॥
जाकी बानी भईहि सो सखी प्रगट भई आइ ।
बेदहुं के आनँद भयौ अदभुत दरसन पाइ ॥५९॥
एक असङ्का बढ़िहि उर चित्त रह्यो बिसमाइ ।
कछुइक नित्य बिहार जस हमहिदेहु समझाइ ॥
प्रभु आज्ञा इक सो भई सो पहिले करि लेउँ ।
ता पीछे जो पूछिहौ ताको उत्तर देउँ ॥ ६१ ॥
सखी कियौ जब चिन्तवन गोपति प्रगटे आइ ।
प्रभु आज्ञा तिनसौं कही सृष्टि रचावहु जाइ ॥
ऐसेही अवतार सब लीन्हें तहा बुलाइ ।
अपनो अपनो काज तुम कीजो समयौ पाइ ॥
धर्मराज सों कहि तबै हमरो बच सुनि लेहु ।
जाके रक्षक भक्ति है ताहि कष्ट जिनि देहु ॥६४॥
भक्तनि छाड़ी सबनि कौ तैरे आगे ल्याउ ।
हरिहि भजन तें बिमुख जे तिनको तुम समुझाउ ॥
पुनि फिर बेदनि सों कह्यो जो पूछी सुनि लेउ ।
नित्यहि नित्य बिहार करि यामें नहिँ सन्देह ॥
नित्य सहज बृन्दाबिपिन नित्य सखी ललितादि ।
नित्यहि बिलसत एकरस जुगलकिशोर अनादि ॥

नवलप्रेम सो रँगे दोउ नित्यहिँ नवलकिशोर ।
होत रहत उतपति प्रलै नहिँ जानत किहिओर॥
वेदहुं जानै अस सब मिथ्यौ भर्म तिहि काल ।
समुझै पूरन सवनि पर नित्य विहारीलाल ॥७०॥
अपने अपने सदन कौ कीनो सवनि पयान ।
ता पाछे सोई सखी भई जु अन्तरध्यान ॥ ७१ ॥
श्रीपति चितयौ आपही पुरुष प्रकृत की कोद ।
तिहि छिन उपजो हीय मे कीजै जगतविनोद॥
प्रथमहि माया तें भयो महोतत्व अहँकार ।
अहङ्कार त्रिविधा भयो तातें जग विस्तार ॥७३॥
त्रिगुन तें प्रगटे तीनि गुण ब्रह्मा विष्णु महेस ।
ता पाछे सुर असुर नर लोकपाल स्वर्गेस ॥७४॥
दोइ मुहूरत मे रचे चौदह लोक बनाइ ।
बडी प्रभुता पुरुषता कापै वरनी जाइ ॥ ७५ ॥
बहुत भांति लीलाचरित तिनको नाहिन पार।
सोइ भुल्यौ भरम्यौ फिरै कियौ चहै निरधार ॥
सब तजि जुगलकिशोर भजि जो चाहत विश्राम।
हित ध्रुव मन बच हित सो सेवौ स्यामास्याम॥७७॥

इति श्रीवृहद वामनपुराण की भाषा सम्पूर्णम् ।

——०——

अथ भक्तनामावली लिख्यते।

दोहा।

हरिवंश नाम ध्रुव कहतही बाढै आनँद बेलि ।
प्रेम रँगी उर जगमगै नवल जुगल वर केलि ॥१॥
निगम ब्रह्म परसत नहीं सो रस सबतें दूरि ।
कियो प्रगट हरिवंश जी रसिकनि जीवनि मूरि ॥
चन्दचरन अंबुज भजहि मनक्रम वचन प्रतीति ।
वृन्दावन निज प्रेम को तब पावै रस रीति ॥३॥
कृपाचन्द के कहतहो मन को भ्रम मिटि जाइ।
विमल भजन सुख सिन्धु मैं रहै चित्त ठहराइ॥
गोपिनाथ पद उर धरे महागोप्य रस सार ।
विन विलम्ब आवै हिये अद्भुत जुगल विहार ॥५॥
पति कुटुम्ब देखत सबै घूंघट पट दिय डारि ।
देह गेह बिसरयो तिन्हैं मोहनरूप निहारि ॥६॥
धीर गँभीर समुद्र सम सील सुभाव अनूप ।
सब अँग सुन्दर हँसत मुख सुन्दर सुखद सरूप॥
शुक नारद उधव जनक प्रहलादिक सनकादि।
ज्यौ हरि आपन नित्य है त्यौ ये भक्त अनादि ॥

प्रगट भयौ जयदेव मुख अद्भुत गीत गोविन्द।
कह्यो महासिङ्गार रस सहित प्रेम मकरन्द॥६॥



पद्मावति जयदेव प्रेम वस कीने मोहन।
अष्ट पद्द दीजो कहै सुनत फिरै ताके गोहन॥
श्रीधर स्वामी तौ मनौ श्रीधर प्रगटे आनि।
तिलकभागवत कियरचो सब तिलकनि परिवानि॥
रसिक अनन्य हरिदास जो गायौ नित्य विहार।
सेवा हूं मैं दूरये कि विधि निषेध जञ्जार॥१२॥
सघन निकुञ्जनि रहत दिन बाढ्यो अधिक सनेह।
एक विहारी हेत लगि छाडि दिये सुख देह॥१३॥
रङ्क छत्रपति काहु को धरी न मन परवाह।
रहे भीजि रस प्रेम मे लीन्हें कर करवाह॥१४॥
वल्लभसुत विट्ठल भये अति प्रसिद्ध ससार।
सेवा विधि जिहि समै की कीनी तिन व्यवहार॥
राग भोग अद्भुत विविधि जो चहिये जिहि काल।
दिनहि न्हावे हेत सो गिरधर श्रीगोपाल॥१६॥
गौड देस सब उद्धर्यो प्रगटे कृष्ण चैतन्य।
तैसहि नित्यानन्द हूं रसमय भये अनन्य॥१७॥

पावतहो तिनकी दरस उपजे भजनानन्द ।
विनहो श्रम छुटि जाहि जो सब माया के फन्द ॥१८॥
रूप सनातन मन बढ्यो राधाकृष्ण अनुराग ।
जानि विश्व नस्वर सबै तब उपज्यो वैराग ॥१९॥
विष समान तजि विषय सुख देस सहित परिवार ।
वृन्दावन का चलत यों ज्यों सावन जलधार ॥
तन तें नीचो आप को जानि बसे बन माहि ।
मोह छाडि ऐसे रहे मनो चिन्हारिहु नाहि ॥२१॥
रघुनन्दन सारङ्ग जो जोवति पाछे आय ।
कृष्ण कृपा करि सबै आनि निज धाम बसाय ॥
भजन रासि रघुनाथ जी राधाकुण्ड स्थान ।
लोन तक्र व्रज को लयो परस्यो नहिँ कछु आन ॥
वन्दन करिकै चिन्तवन गौर स्याम अभिराम ।
सोवतहू रसना रटै राधाकृष्ण सुनाम ॥ २४ ॥
श्रीविलास व्रजनाथ अरु चन्दमकन्द प्रवीन ।
मनमोहनपद कमल सो अधिक प्रीति जिन कीन॥
महापुरुष नन्दन भये करि तन सकल सिंगार ।
सखी रूप चिन्तत फिरै गौर स्याम सुकुवार॥२६॥

नैन सजल तिहिं रँगमगे चित पायौ विश्राम ।
विवस वेगि ह्वै जात सुनि लाल लाडिलो नाम॥
कृष्णदास हते जङ्गलो तेऊ तैसी भाति ।
तिनके उर झलकत रहे हेम नोलमनि काति ॥
जुगल प्रेम रस अवध मे पर्‌यो प्रवोध मन जाइ ।
वृन्दावन रसमाधुरी गाई अधिक लडाइ ॥२६॥
अति विरक्त ससार ते वसे विपिन तजि भौन ।
प्रीति सहित गोपाल भट सोये राधा रौन ॥३०॥
घुमडी रस मे घुमडि रहि वृन्दावन निज धाम ।
वसीवट तट रास के सोये स्यामास्याम ॥ ३१ ॥
भट नारायण अति सरस व्रजमण्डल सो हेत ।
ठौर ठौर रचना करी प्रगट कियो सङ्केत ॥३२॥
वर्धमान श्रीभट्ट अरु मङ्गल व्रज वृन्दावन गायौ।
करि प्रतीति सर्वोपर जान्यो तातें चित्त लगायौ॥
भट्ट गजाधरनाथ भट विद्या भजन प्रवीन ।
सरस कथा वाणी मधुर सुनि रुचि होत नवीन॥
गोविन्दस्वामी गङ्ग अरु विष्णु विचित्र वनाइ ।
पिय प्यारी को जस कह्यौ रागरङ्ग सो गाइ ॥३५॥

मनमोहन मेवा अधिक कीनो है रघुनाथ ।
न्यारी रस के भजन की वात परी तिहि हाथ ॥
गिरधरस्वामी पर कृपा वहुत भई दई कुञ्ज ।
रसिक रसिकनी को सुजस गायो तिहिँ रसपुञ्ज ॥
वीठल विपुल विनोद रस गाई अद्भुत केलि ।
विलसत लाड़िलिलालसुख असनिपरभुजमेलि ॥
विहारीदास निज एक रस जो स्वामी की रीति ।
निरवाहो पाछे भली तोरि सवनि सो प्रीति ॥
मत्त भयो रसरङ्ग मे करी न दूजो वात ।
विन विहार निज एक रस और न कछू सुहात ॥
वर किशार दोउ लाड़िले नवलप्रिया नवपीय ।
प्रगट देखियत जगत मे रसिक व्यास के हीय ॥
कहनी करनो करि गयो एक व्यास इहि काल ।
लोक वेद तजि के भजे राधावल्लभलाल ॥ ४२ ॥
प्रेम मगन नहि गन्यो कछु वरनावरन विचार ।
सवनि मध्य पायो प्रगट लै प्रसाद रस सार ॥४३॥
सेवक की सर को करै भजन सरोवर हंस ।
मन वच कै धरि एक व्रत गाए श्रीहरिवंस ॥४४॥

वंश विना हरिनाम हूं लियौ न ताके टेक ।
पावे सोई वस्तु को जाके है व्रत एक ॥ ४५ ॥
कहा कहौं नहि कहि सको नरवाहन को भाग।
मुख जाको नाम धर्यो निज बानी अनुराग ॥
अति अनन्य निज धर्म मे नायक रसिक मुकुन्द।
बसे विपिन रस भजन के छाडि जगत दुख द्वन्द॥
परम भागवत अति भये भजन माहि दृढ धीर।
चतुर्भुज वैष्णवदास की बानी अति गम्भीर ॥४८॥
सकल देस पावन कियौ भगवत जसहि बढाइ।
जहा तहा निज एक रस गाई भक्ति लडाइ ॥४९॥
परमानन्द किशोर दोउ सन्त मनोहर खेम ।
निर्वाह्यौ नीके सवनि सुदर भजन को नेम ॥५०॥
छाडि मोह अभिमान सब भक्तनि सो अति दीन।
वृन्दावन बसिके तिनहि फिरि मन अनतन कीन॥
लालदास स्वामी सरस जाके भजन अनूप ।
वरन्यौ अति दृढ अक्षरनि लाललाडिलो रूप ॥
अधिक प्यार है भजन सो और न कछू सुहात ।
कहतसुनतभगवतजसहि निसिदिनजाहिविहात॥

बालकृष्ण गति कहा कहैं कैसेहुँ कहत बनै न ।
रूप लाड़िलो लाल को झलमलात तिहि नैन ॥
अति प्रवीन पण्डित अधिक लै सवर्ग की नाहि ।
कीनी सेवा मानसी निसिदिन मन तिहि माहि ॥
ग्यानू नाहरमल्ल की देखौ अदभुत रीति ।
हरीवंशपद कमल सों वाढो दिन दिन प्रीति ॥
कहा कहौ मोहन मदा ताकी गति भइ आन ।
व्यासनन्द अन्तर सुनत तजी तिनहिँ छिन प्रान ॥
विट्ठलदास मुरलीधरन चरन सखे सब काल ।
तैसे दास गोपाल हू गावे ललना लाल ॥५८॥
सुन्दर मन्दिर की टहल कीनी अति रुचिमान ।
सफल करी सम्पति सकल लगा ठिकाने आन ॥
अङ्गीकृत ताकी कियौ परम रसिक सिरमौर ।
करुनानिधि बहु कृपा करि दीनी सनमुख ठौर ॥
बड़ी उपासिक गौरिया नाम गुसाईंदास ।
एक चरन व्रजचन्द बिन जाके और न आस ।
नेह नागरी दास अति जानत नीकी रीति ।
दिन दुलराई लाड़िली लाल रँगीली प्रीति ॥

व्यासनन्द पद सों अधिक जाकैं दृढ बिस्वास ।
जिहि प्रताप यह रस लह्यौ अरु ब्रन्दावनवास ॥
भलौ भांति सेयौ विपिन तजि वधुनि सो हेत ।
सूर भजन मे एक रस काढ्यौ नाहिन खेत ॥६४।
बिहारिदास दम्पति जुगल साधौ परमानन्द ।
ब्रन्दावन नीकै रहे काटि जगत को फन्द ॥६५॥
नीको भांति मुकुन्द को कैसे कहत बनै न ।
बात लाडिलोलाल की सुनि भरि आवत नैन ॥
मनवच करि बिस्वास धरि मानिहि एकै काम ।
मात पिता तिय छाडिकै बस्यौ ब्रृंदावन धाम ॥
अन्तकाल गति का कहौ कोमहू कहो न जाति ।
चतुरदास ब्रन्दाविपिन पायौ अच्छो भांति ॥६८॥
चिन्तामनि वातनिसरस सेवा माहि प्रवीन ।
कहत विविधि भगवत जसै छिन २ उपजत बोन ॥
नागर अरु हरिदास मिलि साये नित हरिदास ।
ब्रन्दावन पायौ दुहनि पूजी मन की आस ।७०॥
नवल सलानी मखिन के मनहो अति अनुराग ।
लाल लडैती कुँवरि को गायौ भाग सुहाग॥७१॥

भली भांति वृन्दा अली अति कोमल सुसुभाव ।
कृपा लड़ैतो कुँवर की उपज्यो अदभुत भाव ॥
कीनो रास विलास वह सुख बरषत सकेत ।
रचना रचि कलपान रचि मण्डनिदास समेत ॥
सेवा राधारमन की भक्तनि के सनमान ।
साते वसि जमुना कियौ तिहि सम नहिँ को आन॥
ते उपासक अधिक है या रस मे हरि दास ।
निसिदिन बीते भजन मे राधाकुण्ड निवास ॥
वरसाने गिरिधर सुहृद जाके ऐसो हेत ।
भोजनहू भक्तनि विना धर्यो रहै नहि लेत ॥७६॥
नन्ददास जो कछु कह्यौ रागरङ्ग मे पागि ।
अच्छर सरस सनेह में सुनत श्रवन उठि जागि ॥
रमन सदा अदभुतहु ते करन कित्त सुठार ।
वात प्रेम की सुनतही छुटत नैन जलधार ॥७८॥
बावर सौ रस मे फिरै खोजत नेह की बात ।
अच्छे रस के वचन सुनि वेगि विवस ह्वै जात ॥
कहा कहौ मृदु भाव अति सरस नागरो दास ।
विहारि विहारी को सुजस गायौ हरषि हुलास ॥

परमानँद माधौ मुदित नवकिशोर बाल केलि ।
कहा रसोली भाति सौ तिहिँ रस मे रहि मेलि ॥
सोयौ नीकी भाति सौ ग्रोसकेत स्थान ।
रह्यौ बडाई छाडि कै सूरज द्विज कल्यान ॥८२॥
खडगसैन के प्रेम को बात कहो नहि जात ।
लिखत ललित लाला करत गये प्रान तजि गात॥
ऐसहि रायौदास की सुनौ बात यह कान ।
गावत करत धमारि हरि गये छूटि तब प्रान ॥
वरनभक्त अदभुत भयौ और न कछू सुहात ।
अङ्गनि की छवि माधुरी चिन्तत नाहि विहात ॥
रोमांचित तन पुलक ह्वै नैन रहै जल पूरि ।
जाकै आसा एक है वृन्दावन की धूरि ॥ ८६ ॥
कहा कहौ महिमा सुभग भई कृपा सब अङ्ग ।
वृन्दावन दासी गयौ जाइ सखिनि की सङ्ग ॥
लाज छाडि गिरधर भजौ करो न कछु कुलकानि ।
सोई मीरा जग विदित प्रगट भक्ति की खानि ॥
ललिताहू लइ बोलि कै तासो हौ अति हेत ।
आनँद सौ निरखत फिरै वृन्दावन रस खेत ॥८८॥

न्रत्यत नूपुर बाँधि के गावत लै करतार
विमल हीय भक्तनि मिलो तृन सम गन्यो सँसार॥
बधुनि विष ताको दियो करि बिचारि चित आन।
सो विष फिरि अमृत भयो तव लागे पछतान ॥
गङ्गा जमुना तियनि मे परम भागवत जानि ।
तिनकी बानी सुनतही बढै भक्ति उर आनि ॥
कृष्णदास गिरिधरन सो कीनो साची प्रीति ।
कर्म धर्म पथ छाडि के गाई निज रसरीति ॥
पूरनमल जसवन्त जो भोपति गोविन्दास ।
हरीदास इन सबनि मिलि सेयो नित हरिदास ॥
परमानँद अरु सूर मिलि गाई सब व्रज रीति ।
भूलिजात विधिभजन की सुनि गोपिनको प्रीति॥
माधौदास बरसानि यौ व्रजविहार के खेल ।
सदा पगे चित सौ रहे हरिजन सौ मेल ॥९६॥
गाई नीकी भाति सो कवितरीति भल कीन ।
मनमोहन अपनाइ कै अङ्गीकृत करि लीन ॥९७॥
जिन २ भक्तनि प्रीति की ताके बस भइ आनि।
से न होइ नृप टहल की नाम देव छइ छानि ॥

जगत विदित पीपा धरनि अरु रैदास कबीर ।
महाधीर दृढ एक रस भरे भक्ति गम्भीर ॥६६॥
जगन्नाथ वत्सल भगत कीन्हो जस विस्तार ।
माधौ भूख्यौ जानि कै ल्यायै भोजन थार ॥१००॥
एक समै निसि सीत सो कापन लाग्यौ गात ।
आनि उढाई तिहिँ समै अपने कर सकलात ॥
विल्वमँगल जब अँध भयौ आपुन कर गह्यौ आइ।
भक्तनि पाछे फिरत यौं ज्यौं बछरू सँग गाइ ॥
रामानँद अगद सोई हरिव्यास अरु कीत ।
एक एक कै नाम तैं सब जग होइ पुनीत ॥१०३॥
राका बाका भक्त है महाभजन रसलीन ।
इन्द्रासन की सुखनि कौ मानत तृन तें हीन ॥
नरसी हौ अति सरस हिय महादेव सम तूल ।
कह्यौ सरस सिगार रस जानि सुखनि कौ मूल ॥
दीनो ताकौ रीझि कै माला नन्दकुमार ।
राखि लियो अपनो शरन विसुखनि मुख दै छार ॥
जहा २ भक्तनि कछु परत है सङ्कट आनि ।
तहा २ सब आपने धरत अभय को पानि ॥१०७।

भगत नरायन भक्त सब धरैं होय दृढ प्रीति ।
बरनै अच्छो भांति मो जैसी जाकी रीति ॥१०८।
रसिकभक्त भूतलघनै लघुमति क्यों कहि जाहि ।
बुधि प्रमान गाये कछू जे आये उर माहिं ॥१०९॥
हरि को निज जस तें अधिक भक्तनजस पै प्यार ।
याते यह माला रची करि ध्रुव कण्ठ सिंगार ॥
भक्तन की नामावली जो सुनि है चित लाइ ।
ताकै भक्ति बढै घनी अरु हरि होइ सहाइ ।१११।
एक बार जिहि नाम लौ हित सो ह्वै अति दीन ।
ताको अगन छाडि है धुव अपनो करि लीन ॥
ऐसे प्रभु जिन नहि भजे सोई अति मति हीन ।
देखि समुझि या जगत मे बुरो आपनो कीन ॥
अजहू सोच विचारि के गहि भक्तनिपद ओट ।
हरिकृपाल सब पाछिलो छमि है तेरी खोट ॥११४॥

इति श्रीभक्तनामावली सम्पूर्णम् ।



अथ मनिसिंगार लिख्यते ।

दोहा ।

हरिवंशहँस आवत हिये होत जु अधिक प्रकास ।
अदभुत आनँद प्रेम को फूले कमल विलास ॥१॥
नवलकिशोरी सहजही झलकत सहजहि जोति ।
उपमा दै वरनो तिनहि यह ढोठ्यो अति होति ॥
रूपरङ्ग को सार तन सार माधुरो अङ्ग ।
चन्दसार को मोद मुख कांतिसार को रङ्ग ॥३॥
ललित लडैतो कुवरि को वरनो कछु इक रूप ।
पियतन मन जो पूरि रहि मोहन सहज सरूप॥
अतिही मोहनो मोहनो पियमन सुख की सोव ।
उपमा सब सेवत तिनहि कोनै नीचौ ग्रोव ॥५॥
नवलछबिलो बदन मन आनँद मोद को फूल ।
इक रस फूल्यो रहत दिन पियतन जमुना कूल॥
कुण्डलदुति अरु मुखप्रभा राजत ऐसी भाति ।
झलमलात मिलि एक ठा मानो रवि ससि काति ॥
चिकुर चन्द्रिका रचि विचित्र चिर मानो हरवानि ।
मनो घटा सिङ्गार की जुरी चन्दपद आनि ॥८॥

गटकनि वेनो को ललित फूलनि गुहो सुढार ।
मनो हरिसिजुत में रते उतरत रवि जो धार ॥
सीसफूल रहि झलकि के तैसो मांग मरङ्ग ।
मानो छत्र सुहाग को लियेऽनुरागहि सङ्ग ॥१०॥
निरखि अरुन वेंदी छवी मति की गति भइ मूक ।
मानो विधि पूज्यो रखिनि आनि फूल वधूक ॥
वङ्कट भ्रकुटी सो हनो अलक जुरो तहँ आनि ।
मानो पियमन मीन को वनसी राखो वानि ॥
सोहन ती श्रवननि लगी विच कुण्डल झलकात ।
मनो कञ्ज हित जानि कै पूछन गये कछु बात ॥
अञ्जनजुत चंचल चपल अचल मे न समाहि ।
अति विसाल उज्जल सुरँग चुभे लाल उर माहि ॥
सहजहि सुचम अलक छुटि परी पलक पर आइ ।
मनहुँ युगल पर नागिनी पिंजरे राखो लाइ ॥
श्रवननि छवि ताटङ्क दुति रही गर्डनि झलकाइ ।
मनो भान आभा परी कञ्जदलनि पर आइ ॥१६॥
कहि न सकत वानिक अनक अधर सुरङ्ग निहारि ।
मानो शुक झुकि रहि छको मन मे कछू विचारि ॥

वेसरि की थरहरनि छबि मीनरिकी मनु ऐन ।
हरि हिरदै मन मीन मनु ताको चितवत लैन ॥
अरुन स्याम उज्जल दसन अति छबि सो झलकाइ।
कञ्ज मे अलि मुक्तनि सहित रँगे मनों बन्दनमाहि॥
सोभा निधिवर चिवुक पर स्याम विन्दु सुख देत।
रहि गयौ अलि सावक मनो कञ्जकली रस हेत॥
नीलविन्दुउपमादुतियकहा कही अतिहि अनूप।
मानो पियामन बिबस ह्वै पर्यौ प्रेम के कूप ॥
द्वै लर मोतिनि कण्ठमै डारी सब छबि निन्द ।
मानो पूरन चन्द पर प्रगट्यौ दुतिया इन्दु ॥२२॥
,जलज-हार हीरावली विचि विचि मनि झलकाहि।
मानो मैन तरङ्ग हैं रूप सरोवर माहि ॥२३॥
रतन खचित चौकी ललित जगमग जगमग होत।
विवि गिरिकञ्चन बीचमनुछबिरविकियोउदोत॥
भूषनजुत मृदु भुजनि को निरखि लाल रहे भूलि।
मानो छबि को लता है फूलनि सो रही फूलि ॥
उरज पीन कटि छीन छबि नवकिशोर रहे चाहि।
मानो आनन्द वेलि सो लागे सुख फल आहि॥

आई उपमा और उर वस किये मोहन मैन ।
मुर्द कञ्ज देखत मनो खुले कमल पिय नैन॥२७॥
अति सुदेस अँगिया बनो सोधे सनो सुरङ्ग ।
पिय मन अलितहँ भ्रमत हैं तजत न कबहू सङ्ग ॥
नीलाम्बर छवि फबि रह्यो मन में रहत विचार ।
मनो सार सिँगार के चाढे वर सुकुवारि ॥२८॥
सारी पीरी जरकसी झलकति छवि सो जोति ।
कुन्दन की बरिषा मनो स्वर्णनदी मे होत ॥३०॥
जब सुरङ्ग सारी सुगति हरितहि भरी सुहाग ।
अन्तर भरि मनु उमगि कै प्रगव्यो पिय अनुराग ॥
राजत सुन्दर उदर पर अद्भुत रेखा तीनि ।
देखत साँवा रूप की लाल भये आधीन ॥ ३२ ॥
सोभित नाभि गँभीर ढिग रोमावलि अनुसार ।
मानो निकसो कमल तें सूक्षम रेख सुढार॥३३॥
पृथु नितम्ब ऊपर बनो मनिमै किङ्किनि-जाल ।
फिरि आई चहुओर मनु छवि दीपनि की माल॥
अति सुढार सुठि सुमिल बनि मनिमै जेहरि चारि ।
चलनि कृपीली भाँति पर मत्त मरालनि वारि ॥

पाइल नूपुर की झनक होतहि मन्दहि मन्द ।
मानु सावक कलहंस के कूजत भरे अनन्द ॥
चरन कमल कोमल सुरँग मधुप लालमन-मत्त ।
दृग के जल छ्वावत रहत कर कमलनि सेवन्त ॥
मेहँदी कौ रँग छबि रह्यौ नख मनि झलक अपार।
मनो चन्द कमलनि मिले रही न और सँभार ॥
करि सिँगार दियौ दीठि उर स्यामल विन्दु कपोल।
मुसकनि छवि वदले मनो राख्यौ पिय मन चोल ॥
अपनो जस कछु रचत नहि ऐसौ लाल की वात ।
प्रानप्रिया गुन सुननहित सरस करन ह्वै जात ॥
सव अङ्ग अद्भुत भामयुत सहज रूप की खानि।
एती मति मोपै कहाँ नख छवि सकौ वखानि ॥
उपमा तौ सत जे कही ऐसौ चित्त विचारि ।
जैसे दिनकर पूजिये आगे दीपक वारि ॥ ४२ ॥
रूप माधुरी सहजहीं झलकत नये तरङ्ग ।
उपमाहू सव सफल भई वडो ठौर के सङ्ग॥४३॥
याही तें कछु वक कही याहू वात को फेर ।
जैसे रती कहै मते समुझे सोभा मेर ॥ ४४ ॥

अंग अंग मृदु-माधुरी अतिहि रसीली आहि ।
तैसे मधुर किशोर पिय जीवत तिनको चाहि ॥
ललित लडैती कुँवरि बिन और न कछू सुहाइ।
नेकु नैन की कोर के लीनों चित्त चुराइ॥४६॥
अमित कोटि ब्रह्माण्ड की प्रभुता मन लगि थोर।
कर जोरे चितवत रहैं बड़ दृगनि की ओर ॥
देखौ बलि या प्रेम की सर्वस लीनो छीन ।
महामोह गज-मत्त पिय बिन अंकुस बस कीन ॥
अखिल लोक की साहिबी टोनी टन ज्यौं डारि।
छिन छिन प्रति सेवा करैं रहे अपनपौ हारि ॥
पाना पान सिंगार सब करत आपने हाथ ।
बँधे जु प्रेम अनङ्ग गुन फिरत प्रिया के साथ ॥
खेलत मन ऐसे भये जैसे खेलत जूप ।
तन मन धन सब हारि कै भये दीन जस भूप ॥
नवकिशोर के प्रेम की बात कही नहिं जाइ ।
सहचरि जो निज कुवरि की तिनके गहते पाइ ॥
नैन सैन चितवनि चपल मनमुक्ता छवि ऐन ।
सखी सबै मनो हसनी चुगतिहिं भरि भरि नैन ॥

पिय को रीति पिरीत सुनि हिय में यहै हुलास।
दासी जह है प्रिया की तिनके ह्वै रहै दास ॥५४॥
अब सुनि प्यारे लाल की छविहि नाहिने ओर।
बँधे लाड़िली प्रेम सों ऐसे रसिक किशोर ॥५५॥
कुवरि माधुरी रूप को सोज कहत बनै न ।
घटि बढि कही न जात है जैसी दोउ नैन ॥५६॥
मोहन के मोहन सबै अङ्ग रहे झलकाइ ।
नेकु चितै मुख माधुरी नैन गिरत मुरझाइ ॥
प्रथमहि प्रियहि सिगारि कै पिय को करत सिंगार।
सोभा उभै निहारि सखि करति प्रान बलिहार ॥
इक रस रूप समान वय दम्पति नवलकिशोर।
नख सिख बानी एक सा छैल छबीली जोर ॥५८॥
है मूरति सिगार की पुनि कीनो सिङ्गार ।
मिले रूप कैं सिन्धु है अब को पावै पार ॥६०॥
अब सुनि रङ्गविहार की वात न कवहु अघात।
इक रस प्रेम छके रहै और न कछू सुहात ॥६१॥
ललित चरन पै रस परत ललित रँगीले लाल।
राजत अव सोभा सबै सङ्ग छबीली बाल ॥६२॥

लाल ललित अब लाडिली नवलछवीली भांति।
प्रेम प्यार के चाह सो प्रीतम उर लपटाति ॥६३॥
सब अँग सुन्दर सोहनी रूप रासि सुकुवारि ।
महामोह मनमोहनी वस किय नेकु निहारि ॥
लाल रँगीली सङ्ग रँग करत विनोद अनङ्ग ।
कबहू बातन मे हँसी कबहू भरत उछङ्ग ॥६५॥
कबहू कुच करजनि छुवत भौंह भङ्ग ह्वै जात ।
अति प्रवीन रसखेल मे चूकत नहि कोउ घात॥
अन्तकाल पाइनि परत मृदु मुख हाहा खात ।
ऐसे वचननि सहचरी सुनि २ सब बलिजात ॥
विविधि भांति रतिकेलि रँग छिन २ औरै ओर।
करत रँगीले लाल दोउ परे रसिक सिरमौर ॥
कमल कपोलनि पर कछू लागी पीक सुरङ्ग ।
मनो झलक अनुराग की उछरि परी छवि सङ्ग॥
अरिल्ल ।
बाढी अतिही चोप न उरहि समाति है ।
समुझि लाडिली ताहि हिये लपटाति है ॥
नवलरँगीली केलि छवीली भांति है ।
तिनके रस की बात कहो क्यो जाति है ॥

छवि निधि दुलहिन नायिका नायकरूप निधान।
प्रेमरङ्ग तन मन रँगे ह्वै गये एकै प्रान ॥ ७५ ॥
ललित कुवरि वरनो कहा नखसिख रूप अपार।
नेनकोर पाछे लगे फिरै रसिक सुकुवार ॥७६॥
मन अटक्यौ छवि अलक सों नैन वदनतन रङ्ग।
श्रवन लगे वैननि मधुर नासा सौरभ रङ्ग ॥७७॥
अङ्ग अङ्ग पिय के सबै परे प्रेम के फन्द ।
रुचि लै मुख जीवति रहै श्रीवृन्दावनचन्द ॥७८॥
भई भीर छवि की तहा और प्रीति उर माहि।
पर्यौ लाल मन जाय तहँ निकासन पावत नाहि ॥
अति उदार सुकुवार मन रसिक सुंदर सिरमौर।
नैन सैन बानन कयौ छाडी नहि तउ ठौर ॥८०॥
नैन श्रवन नासा अधर चिबुक रूप को खानि ।
गहि पियमन दून मवनि मिलि दयौ प्रेम के पानि॥
पुनि फल उरजनि की झलक लेति लालमन चोरि।
कुरजनकरिजवछुवतपियकछुमुसकतिमुखमोरि ॥
परिरम्भन चुम्बन अधर महामधुर रस पाइ ।
बीच सलोनी चितवनी लेतहिँ सुखहि वढाइ ॥

हाव भाव लावण्यता विभ्रम अंग निहारि ।
उज्जल हांसि कपूर की पुटि दै रचे सँवारि ॥
भौह वङ्क नैननि भृकनि कर धूननि मुख नैत।
अदरक सूच अचार ढिग ज्यौं रुचि त्यौं करि लेत॥
नैननि रसना करि रसिक जेंवत तृपत न होइ।
अद्भुत वतिया मदन की कहि न सकत है कोइ॥
भाजन भूषन अग दुति छविजल दुतिहि न और।
नैन कटोरिन करि पिवत स्यामास्यामकिशोर ॥
बीरी मुख अनुराग की स्वास पवन आनन्द ।
अति सुवास मृदुहास विच होत मन्दही मन्द ॥
पौढे प्रेम प्रजङ्क पर ओढि प्यार को चीर ।
गौरस्याम दोउ अग मिलि यो ज्यो द्विविधा नीर॥
परम रसिक रसरासि दोउ परि जु प्रेम के फन्द।
रहत भरे आनन्द मे जुग चकोर विविचन्द ॥
सखी चकोरै अति सरस है ससि छवि रसरग।
पल २ पोवति दृगनि भरि होत न कबहूँ भग॥
हित ध्रुव सखियन सरन गहु ऐसे मन अनुसार।
अरु तिनही को सग करु जिनके यहै विचार ॥

रचि कीनी सिंगार मनि जो ले राखे सीस ।
ताके हिय में वसत रह श्रीवृन्दावन ईस ॥
जैहै मन सिंगार की सब गुन भरि अनुराग ।
पहिरो पिय हिय प्यार सो मोहप्रेम के ताग ॥
अद्भुत सरिता प्रेम की वृन्दावन चहुँ ओर ।
नव नव रंगतरंग उठि मदन पवन झकझोर ॥
ऐसे रसिक किशोर ध्रुव ध्रुव के हिय मे राखि ।
अद्भुत रस की माधुरी नैननि-रसना चाखि ॥
दोहा कहि सिंगार मनि साठ सु चौतिस आठ ।
प्रेम तिही उर माल की रहै जो करि ध्रुव पाठ ॥

इति श्रीमनसिङ्गार सम्पूर्णम् ।

अथ भजनशतक लिख्यते ।

दोहा ।

श्रीहरिवंश सरोजपद जोपै सेयौ नाहि ।
भजनरीति अरु प्रेम रस क्यो आवे मन माहि ॥
हरिवँशचँदपद अरविंदपद ये निज सर्व सुजानि ।
हितध्रुवमिथुनकिशोरसो तिहिबल ह्वै पहिचानि ॥

सोरठा ।

प्रेम सहित हुलसात सेवा स्यामास्याम की ।
कीजे मनही भाति दिन २ अति अनुराग सों ॥३॥

दोहा ।

प्रथमहि मज्जन कीजिये सौरभ अङ्ग लगाय ।
ता पाछे रचि पचि करै सुन्दर तिलक बनाय ॥
तिय के तन को भाव धरि सेवा हित सिँगार ।
जुगल महल की टहल को तब पावै अधिकार ॥
नारी किंवा पुरुष है जाके मन यह भाव ।
दिन २ तिनकी चरन-रज लै लै मस्तक लाव ॥
दुलहिनि दूलह छवि झलक तहँ राखै दोउ नैन।
भाव तरङ्गनि मनहु रँग सुनत मधुर मृदु बैन ॥
लाल लडैती केलि कर अद्भुत प्रेम विलास ।
तिनही के रँग रँगि रहै सबते होइ उदास ॥८॥
मन की दृढता हित लगि कही भजन की रीति ।
सुनिये हिय के श्रवन दै तब उपजै मम प्रीति ॥
राधावल्लभ रूप रस कबहु नैन मत पानि ।
प्रेम सहित निज केलि गुन करि रसनादिनगानि ॥

गदगद सुर नैना सजल दम्पति रस रहि भीन ।
इहि गति वृन्दाविपिन में फिरै प्रेम तन लीन ॥
नील पीत अचल झलक नैननि मे रहि नित्त ।
जावकजुत नखचरणदुति बसौ सदा ध्रुवचित्त ॥

सोरठा ।

चलत रहौ दिन रैन, प्रेम वार धारा नयन ।
जागत अरु सुख सैन, चितै २ विधि कुवरि छवि ॥

दोहा ।

करत टहल वन्दन अधिक रचै प्रेम मन लीन ।
ते तब ऐसे सब भये ज्यौ सालन विन लौन ॥१४॥
चित ध्रुव निरखत नेकु नहि वैभवता की ओर ।
रच प्रेम मे अपनपौ हारत नवलकिशोर ॥१६॥
साधन करत अनेक जो कोटि कोटि जुग जाहि ।
तवहु न आवत प्रेम विनु रसिक कुवरि मन माहि ॥
एक प्रेम पैहैं कुँवर करत जतन वहुतेर ।
मन वच निश्चै जानि यह एक ग्रन्थ वहु फेर ॥
नैनन झलक्यौ प्रेम जल भई न तन-गति और ।
तिहि उर कहु कैसे लसै परम रसिक सिरमौर ॥

नवकिशोर इक प्रेम बस नाहिन आन उपाइ।
बहुत चतुरई किन करौ वातै कोटिबनाइ ॥१६॥
मन की गति कौ रोकि के भयौ रहै दिन दीन।
रसिकनि की पद रज तलै लुठत सदा ह्वै खीन॥
सहजहिं जल अरु प्रेम को एक सुभावहि जान।
चलत अधिक तिहि ठाव कौ पावत जहां निवान॥
देखौ अदभुत प्रेम फल सबते ऊँचौं आहि ।
सीस करै जब चरण तर तब पहुचै कर ताहि ॥
वैभव सुख ध्रुव जहाँ लगि छत्रधार सत अर्व ।
प्रेम गरीबी सहज पर वार वार द्यो सर्व ॥२३॥
जब लगि मन चचल भयौ फिरत विषै सुख माहि।
तब लगि दम्पतिचरन सो होत प्रेम छिन नाहि ॥
मन गति चंचल अवनि तें उपजत छिन सत रङ्ग।
आवत तबही हाथ जौ रसिकनि की होय सङ्ग॥
भयौ न रसिकनि सङ्ग जौ रँग्यौ न मन रँग प्रेम।
पारस विन परसै कहा होत लोह ते हेम ॥२६॥
जब लगि मन गज खुभत नहि प्रेम पङ्क मे आइ।
तब लगि पाचौ रिपिनि के सुख मे रहत समाइ॥

सोरठा ।

रसिकनि के रङ्ग सङ्ग, रे मन आन विचार तज।
नैननि को लै रङ्ग, मिथुनरूप रसरङ्ग कर ॥२८॥

दोहा ।

रे मन रसिकनि सङ्ग विनु रंच न उपजे प्रेम ।
या रस को साधन यहै और करहु जिन नेम ॥
दम्पति छवि मे मत्त जे रहत दिनहि इक रङ्ग ।
हितसो चित चाहत रहौं निसिदिन तिनको सङ्ग॥
झूलत झूमति दिन फिरै घूमत दम्पति रङ्ग ।
भाग पाय छिन एक जो पैहैं तिनको सङ्ग ॥३१॥
सेवा व्रत तीरथ भ्रमन फल तेहि कालहि पाइ ।
भक्तन सँग छिन एक मे लेत भक्त उपजाइ ॥३२॥
जिनके हिय मे बसत है राधावल्लभलाल ।
तिनकी पदरज लेइ ध्रुव पिवत रहौ सब काल ॥
महामधुर सुकुवार दोउ जिनके उर बसि आनि।
तिनहूं ते तिनको अधिक निसै के ध्रुव जानि॥
जिनके जाने जानिये जुगलचन्द सुकुवार ।
तिनको पदरज सीस धरि ध्रुव के यहै अधार ॥

सोरठा।

तन सम जब ह्वै जाहि, प्रभुतासुख त्रैलोक को।
यह आवै मन माहि, उपजै रंचक प्रेम जम ॥३६॥

दोहा।

मन वच धरैं अनन्य व्रत करत भजन रसरीति।
तैसहि भावत स्याम को हित भुव मानि प्रतीति॥
पिय प्यारी के पद कमल निसवासर करि ध्यान।
रे मन भजन अनन्य मे मिलऔ मति कछु आन॥
राधावल्लभलाल से परम रसिक सिरमौर।
ते पद छाडे मूढमति खोजत फिरि कछु और॥
ज्ञान धर्म व्रत कर्म मे देतहि मन अज्ञान।
करत आस तन्दुलन को कूटत है तुस धान॥
राधावल्लभलाल-यश जिन उर नाहि सुहात।
देखौ ते नर मन्दमति करत आपु अपघात॥४१॥
सजम व्रत मष करत हैं वेद पाठ तप नेम।
इन करि हरि पैयत नही विन आये उर प्रेम॥
कर्म धर्म मत अमित के त्यागि साख विधि जोग।
माया उदधि प्रवाह मे द्यौ बहाय सब लोग॥

तहां जो नौका कर परे भक्ति विमल रस सार ।
तिहि पर भक्तनिवल कृपा चढत सुलभ ह्वै पार ॥
जे अनुसर है ज्ञान पथ निपटत विरला कोइ ।
तिहि साधन कौ फल इहै मुक्ति जीव कौ होइ ॥
कर्म श्राद्ध मे कुशल जे पितरलोक जे जाहि ।
भक्त गिनत नहि मुक्ति कौ औरलोक किहि माहि ॥
कर्म धर्म मे करहु जिन भगवत धर्म मिलाइ ।
सिहसरन गहि मूढमति स्यारसरन कत जाइ ॥
बडी मूढता गहि जिये लिये लोक की लाज ।
पाछे गर्दभ की गद्यौ चढे बडे गजराज ॥ ४८ ॥
विधि निषेध के हैं बंधे और धर्म मृग मानि ।
केहिर पुनि विन वध नहि भगवत धर्महि जानि ॥
विषई है इन्द्रीन वस भक्त अनन्य जो होइ ।
कर्म कोटि जितेन्द्रि यह तिहि समान नहि कोइ ॥
श्रुतिपुरानविधि सुमिर बहु अलप आय इहि काल।
लेहु सार गहि हंस जिमि विमल भजन नंदलाल ॥
रीति भजन की मुत यहै छाडे सबकी आस ।
जुगलचरन की सरन गहि मन मे धरि विश्वास ॥

भक्तहि अन्तर को रचै नानाविधि की फन्द ।
चित्त भ्रान्ति सब दूर करि करौ भजन आनन्द ॥
नानाविधि पथ भजन के भजत तिनहि सब कोइ ।
जो है जिहि की भावना सिद्धि सोइ पै होइ ॥
भवन चतुरदस सुख नहीं भक्तनपद सम तूल ।
माया कौतुक जो कछू सो है सब दुखमूल ॥५५॥
सो दिन कबहू आयहै मनहि वासना जाहि ।
सरसचित्तअहिनिसिफिरो सघनविपिनवनमांहि ॥
भक्ति प्रकार अनेक विधि मन मन औरै बात ।
भोजे विपिनविहार रस तिनहिन और सुहात ॥
जे सेवत वृन्दाविपिन जुगल कुँवरि सुखऐन ।
ते वैकुण्ठ सुखादितन चितवत नहिँ भरि नैन ॥
नौतन वैस किशोर छवि बसत जिनहि उर नित्त ।
पौगरादि लीलादि हूं भावत नाहिन चित्त ॥
सकल भजन को माह है हित ध्रुव यह रस सार ।
जुगल कुवर सुकुवार नव नितकृत विपिनविहार ॥
नवलप्रियाछवि बसि रहौ इहिविधि नैननि मांहि ।
निकसत सघन लतान ते धरैं कण्ठ पिय बाहि ॥

नीलाम्बर रह अरुभि कै कनकलतनि सों आहि ।
हूहि छवि सो कब निरखिहौं पियनिरवारतताहि॥
नवल कुञ्ज नव सहचरो नवलखगादि कुरङ्ग ।
सब नवलनि मे नवल दोउ करत केलि सुखरङ्ग ॥
अदभुत रस सुख सार में कब ह्वेहै मन लीन ।
ध्रुव अखिया तहँ यो रहैं ज्यौ जल में गति मीन ॥
इहि विधि गति ह्वै है कबहुं और न कछू सुहाइ ।
वृन्दावन सुखरङ्ग मे रहै चित्त ठहराइ ॥ ६५ ॥
सकल बात घटते घटै मन की वृत्ति अनेक ।
वृन्दाविपिनबिहाररस यहै बढै रस एक ॥६६॥
विवस सदा बिहरत रहौ अदभुत सुखहि विचार।
नैन सजल ह्वै के ढरै सोभा विपिनविहार ॥६७॥
जिनको मन ध्रुव रचि रहै वृन्दावन सुखरङ्ग ।
तिहि सुख को जानै सोई डोलत भये मतङ्ग ॥
सुनि ध्रुव जब लगि प्राण हैं आनहु कछु जिन चित्त ।
परम रसिकवर विवि कुँवर हिये लड़ावहु नित्त ॥
ऐसे रसिककिशोर तजि भजत मन्दमति आन ।
मानुषतन खोवत वृथा समुझत नहि कछु हान ॥

जे नर वृन्दाविपिन तजि अनतहि मन लै जात।
काञ्चन तजि गहि काच को पुनि पीछे पछतात॥
धावत वृन्दाविपिन तजि जो मन आन विचार।
अतिही दुर्लभ ठौर यह ताते कढियत मार॥७२॥
दुर्लभ वृन्दावन अहो राख्यौ सब तें गोइ।
तिहिं ठा पावत रहत क्यो भागहीन जो होइ॥
करतहिविविधिविलासतहँमिथुनरसिकसिरमौर।
वृन्दावन विन चित्त मे आनहु कछु जिन और॥
जे नर निन्दित मन्दमति वृन्दावन को वास।
सपनेहु परस न कीन्ह जे तजु ध्रुव तिनको आस॥
दुर्लभनिधि देखत सुनत सो आवत उर नाहि।
जिन धर्महि से कष्ट बहु हठि ठानत मनमाहि॥
पाचो इन्द्री साधि कै जोग मौन व्रत लीन।
देखौ भजन अनन्य विन वाद वृथा श्रम कीन॥
जौ ह्वै आवत देह सो कैसहुँ दोष विशाल।
जो है एक अनन्यव्रत तजत न ताहिँ गुपाल॥
जो घरनी है अति बुरो पति नहि छाडत ताहि।
देखतही पर पुरुष तन तजत ताहिँ छन माहि॥

विन अटके मन पद कमल जो छिन रहत पराय।
देखत यम विहरत मनो जीवत मृतक समान ॥
विधि किशोर छवि रङ्ग जो नैननि भीजे नेह ।
अरु मन भयौ न मैंन सौ तौ निसफल भइ देह ॥
विन अरपै सुनि जो कछू जे लागत हैं खान ।
देखौ तिहि अपराध कौ कहँ लगि कहौं प्रमान ॥
जलहू भूलि न पीजिये विनु लीन्हें हरि नाम ।
ऐसी जो उपजै मनहि तव पावै सुखधाम ॥८३॥
राधावल्लभलाल को रुचि सो ज्यावौ नित्त ।
सो जूठो नित पाइये और न आनहु चित्त ॥८४॥
सुनि ध्रुव धर्मी यान सो कवहु न कीजै वाद ।
सव तजि दिनहि निसक ह्वै लीजै महाप्रसाद ॥
रे मन लागत भोग जव कीजै तव न विचार ।
सव प्रसाद लै पाइये व्यौरी भेद निवार॥ ८६ ॥
जो है मन विस्वास ध्रुव तव सुधरी सव वात ।
नातर माया-पन्थ में फिरै जु टक्कर खात ॥ ८७ ॥
ज्यौं चातक स्वाती विना परसत नहि जल और ।
दृढता यौं मन चाहिये फिरै न वहुती ठौर ॥८८॥

विच २ दुख सुख देह के ह्वै आवत अनियास ।
भजनपन्थ तें डिगहु जिन मन मे राखि हुलास ॥
विपतिकाल व्यौहार मे माया मोह समीर ।
डूवत वहु विधि चित्त कौ कोटि कहीय जु धीर ॥
प्रभुता सम्पति के भयौ इन्द्रीवस नहि होइ ।
परम धीर विनु कैसहू सकत राखि नहि कोइ ॥
परतहिप्रेम प्रवाह मे रहत सरस दिन चित्त ।
दुख सुख सम्पति विपति कौ एक समै एकित्त ॥
अलपवुद्धि कलपत कछू भक्तनचरण प्रताप ।
इहिविधिजोनितअनुसरे ताहिचिविधिनहिताप ॥

सोरठा ।

भक्तन सो अभिमान प्रभुता भये न कीजियै ।
मनवच निसै जान इहि सम नहि अपराध कछु ॥

दोहा ।

सकल वयस सतकर्म मे जो पै वितई होइ ।
भक्तन कौ अपराध इक डारत सवको खोइ ॥
और सकल अघमुचन को नाम उपायहि नीक ।
भक्तद्रोह को जतन नहि होत वज्र की लीक ॥

निन्दा भक्तन की करै सुनत जौन अघरासि ।
वे तौ एकै संग दोउ बँधत भानुसुत पास ॥९७॥
भूलिहु मन दीजै नहीं भक्तननिन्दा ओर ।
होत अधिक अपराध तिहि मत जानहु डर थोर ॥
सेवा करत में भक्तजन होइ प्राप्त जो आइ ।
सो सेवा तजि वेगही अर्चहु तिनकौं जाइ ॥९९॥
भक्तन देखे अधिक ह्वै आदर कीजै प्रीति ।
यह गति जो मन की करै जाइ सकल जगजीति ॥
जो अभिमान न कीजिये भक्तन सों होइ भूलि ।
सुपच आदिहू होइ जौ मिलियै तिनसों फूलि ॥

कुण्डलिया ।

बहु बीती थोरी रही सोऊ बीती जाइ ।
हित ध्रुव वेगि विचारि कै बसि वृन्दावन आइ ॥
बसि वृन्दावन आइ लाज तजिकै अभिमानहि ।
प्रेमलीन ह्वै दीन आप को तृन सम जानहि ॥
सकल सार को सार भजन तू करि रसरीती ।
रे मन सोच विचार रही थोरी बहु बीती ॥१०४॥

सोरठा।

ब्रुन्दावन रसरीति रहै विचारत चित्त ध्रुव ।
पुनि जैहै वय बीति भजिये नवलकिशोर दोउ ॥

दोहा।

दुर्लभ मानुष जनम है पैयत केहूँ भाति ।
सोई देखो कौन विधि बाद भजन बिनु जाति ॥
विषई जल मे मीन ज्यो करत कलोल अजान ।
नहि जानत ढिग कालवस रह्यो ताकि धरिध्यान ॥
ज्यो मृग मृगियनि जूथ सँग फिरत मत्त मन बाँधि।
जानत नाहिन पारधी रह्यो काल सर साधि ॥
निसिबासर मग करतली लिये काल कर वाहि।
कागद सम भइ आयु तव छिन २ कतरत ताहि ॥
जिहि तन को सुर आदि सब बांछत है दिन चाहि।
सो पाये मतिहीन ह्वै ब्रुथा गँवावत ताहि ॥
रे मन प्रभुता काल की करहु जतन ह्वै ज्यो न।
तू फिरि भजन कुठार के काटत ताही क्यो न ॥
पुरुष सोई जु पुरीष सम छाडि भजै ससार ।
वियन भजन दृढ गहि रहै तजि कुटुम्ब परिवार ॥

सुख मे सुमिरे नाहि जो राधावल्लभलाल
तब कैसे सुख कहि सकत चलत प्राण तिहिकाल
ढूंढ्यौ करि विनती दियो कञ्चन काच बताइ
इनमें जाको मन रुचै सोई लेहु उठाइ ॥११२॥

सोरठा ।

तब पावै रससार सज्जनजन आवै हिये ।
बात कहौं विस्तार भजन सनेही प्रेम को ॥११३॥

दोहा ।

यह रस तौ अति अमल है रहै विचारत नित्त ।
कहत सुनत ध्रुव भजनसत दृढता ह्वै है चित्त ॥

इति श्रीभजनसतसम्पूर्णम् ॥ शुभ भूयात् ।



मङ्गल लेखकाना च पाठकाना च मङ्गलम् ।
मङ्गलं सर्वसाधूना भूमौ भूपतिमङ्गलम् ॥ १ ॥

काश्या मध्ये लक्ष्मीनारायणसमीपे गङ्गातटे मानमन्दिर मध्ये राजारामब्राह्मणेन लिखितम् स० १८५७।१७२२,

